साहित्य विशेषांक

मार्च 2026 रु.20/-

गाँव गिराँव

राष्ट्रीय हिन्दी मासिक

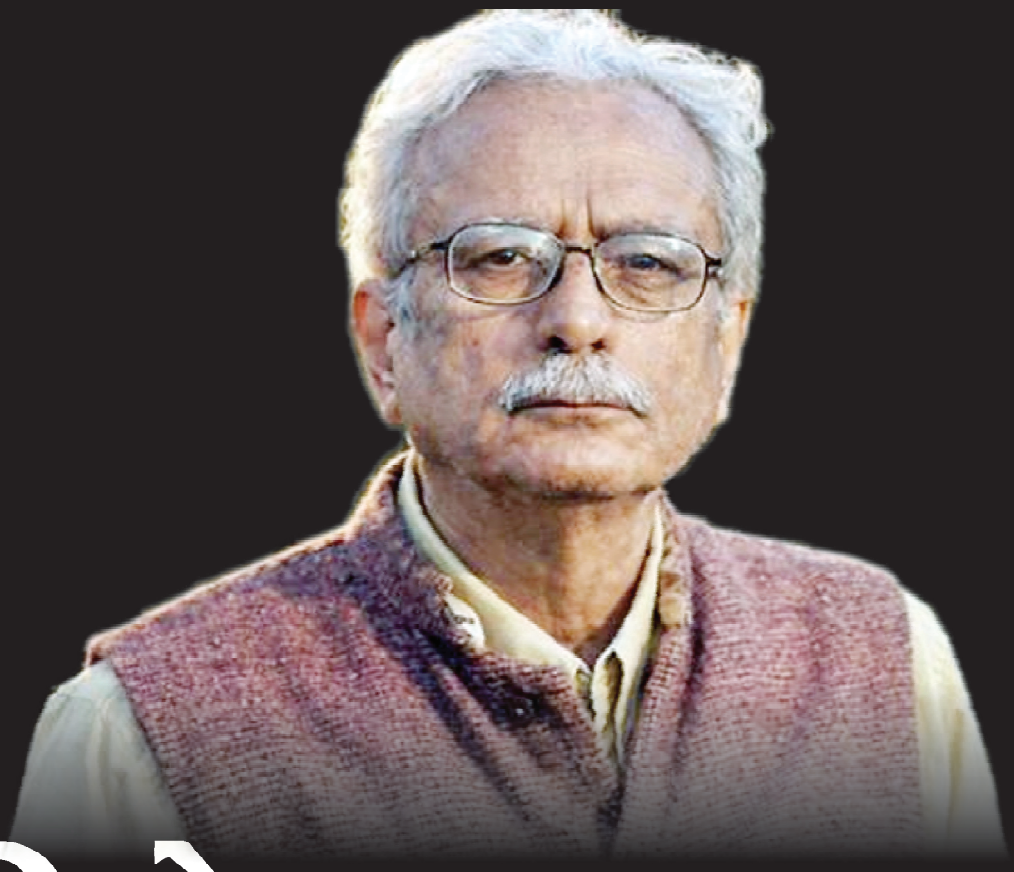

विनोद कुमार शुक्ल

अनंत कविता की अंतिम लय

कार्यालय नगर पंचायत रानीगंज, जनपद-प्रतापगढ़

स्वच्छ रानीगंज

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

सुन्दर रानीगंज

नगर पंचायत रानीगंज जनपद-प्रतापगढ़ अपने नागरिकों से निम्न अपील करता है।

1. सभी नगर वासी एक वृक्ष अवश्य लगायें।
2. पटरी दुकानदार सड़क / पटरी पर दुकाने न लगायें।
3. नगर को स्वच्छ बनाये और बीमारी से दूर रहने के लिए खुले में शौच न जाये।
4. कूडे को स्वयं ही कम्पोस्टिंग करके खेतों में उर्वरक हेतु उपयोग करे।
5. प्लास्टिक, पॉलीथीन, थमोकोल का प्रयोग 15 जुलाई, 2018 से पूर्णतया प्रतिबंधित है, इसका प्रयोग कदपि न करें उसके स्थान पर जूट या कपड़े के बने थैले का प्रयोग करें।
6. किसी भी प्रकार के अतिक्रमण से दूर रहे नाला/नाली व सड़कों को अवरोध मुक्त रखें।
7. जन्म-मृत्यु का पंजीकरण 21 दिन के अन्दर करवायें और किसी भी अनावश्यक कागजी कार्यवाही से मुक्त रहें।
8. प्रधानमंत्री स्ट्रीट वेंडर्स आत्म निर्भर निधि योजनान्तर्गत रेहड़ी और पटरी वालों (छोटे सड़क विक्रेताओ) को अपना खुद का काम शुरू करने के लिए प्रथम बार में धनराशि 10,000.00 (दस हजार) रुपए तक लोन मुहैया कराया जायेगा। सरकार द्वारा लिया गया ऋण एक वर्ष के भीतर किश्त लौटाने के बाद द्वितीय बार में धनराशि 20,000.00 (बीस हजार) रुपए तथा तृतीयबार में धनराशि-50,000.00 (पच्चास हजार) रुपए तक का लोन प्राप्त किया जा सकता है।
9. अपने घर के कचरे को डोर टू डोर कलेक्शन कर रहे कूड़ा गाड़ी को ही दे।
10. यह नगर आपका है इसे स्वच्छ बनाये रखने में निकाय को सहयोग प्रदान करें।
11. स्वच्छ सर्वेक्षण 2025 के रैकिंग में सहयोग करें।

महेन्द्र कुमार सिंह	**मीरा गुप्ता**	**आदित्य प्रजापति**	**शिव सहाय अवस्थी**
अधिशासी अधिकारी	**अध्यक्ष**	**अपरजिलाधिकारी / प्रभारी**	**जिलाधिकारी**
नगर पंचायत रानीगंज	**नगर पंचायत रानीगंज**	**अधिकारी स्थानीय निकाय**	**प्रतापगढ़**
जनपद-प्रतापगढ	**जनपद-प्रतापगढ़**	**जनपद-प्रतापगढ़**	

पत्रांक- 450(i)/ न०पं०रानीगंज / 2025-26 दिनांकः 12 जनवरी, 2026

गाँव गिराँव

वर्ष : 14, अंक : 4, फरवरी-मार्च 2026, पृष्ठ 44, मूल्य : 20/-

सलाहकार सम्पादक - योगेन्द्र नारायण, दिनेश चंद्र
सम्पादक - श्रीधर द्विवेदी
समाचार सम्पादक - डॉ. पंकज कुमार ओझा
प्रबन्ध सम्पादक - गुरु प्रसाद शुक्ल
सहायक सम्पादक - कमलेश पाण्डेय, रविन्द्र प्रताप सिंह गोपाल मौर्य, महेश कुमार यादव
उप सम्पादक - वीरेन्द्र कुमार विन्द नागेश्वर सिंह, रामप्रसाद यादव
विज्ञापन प्रबन्धक - उमेश चन्द जैन
डिजिटलएग्जिक्यूटिव - इ. अमित पटेल
लेआउट व डिजाइन - मंजीत कुमार गुप्ता

नेशनल मीडिया एक्जक्यूटिव
महेन्द्र प्रसाद गांधी-9415874679

राज्य प्रभारी - दिल्ली - यश सिंह 8882678591
चंडीगढ़ - ओ.पी. राय 8009069795
लुधियाना - गुरदीप सिंह-9815453958
पटना - अमित मिश्रा- 9263056540
पूर्वी उ0प्र0 - प्रदीप राय- 8546055042
पश्चिमी उ0प्र0- अनिल कुमार बाजपेयी-8052159000
लखनऊ - डा. विजयकांत पाण्डेय - 8795506060
प्रयागराज- मनोज पाण्डेय - 9140410568
मिर्जापुर - राजेश कुमार मिश्र- 6393139610
म0प्र0 - प्रहलाद पटेल - 7566126043
रीवा- नन्दलाल पाण्डेय- 9981962439

विशेष प्रतिनिधि- अरविन्द सिंह (वाराणसी) 9919442266 कालीदास त्रिपाठी (चन्दौली) 9838454120, ओमकार नाथ- 9415698795, अशोक जायसवाल- 9451891800, मनोज यादव- 9598155820

कार्पोरेट आफिस

गाँव गिराँव मीडिया प्रा0लि0
मिथिलेश कुमार (ब्यूरो चीफ)
सी-216, सेक्टर-63 नोएडा, गौतम बुद्धनगर
उत्तर प्रदेश पिन-201309
मो0 - 9811191394, 9910768136
ई-मेल – gaongiraw@gmail.com
बेवसाइट - www.gaongiraw.in

मुम्बई ब्यूरो- 704/25 सोनम मारी गोल्ड,राम मन्दिर के पास, ओल्ड गोल्डेन नेस्ट-3 मीरा भयन्दर रोड भयन्दर, (ईस्ट) थाणे महाराष्ट्र-401105 8850955358, 9930046946

हेड ऑफिस पत्राचार- 13, दीपशिखा अपार्टमेंट गांधीनगर, सिगरा, वाराणसी, उप्र-221010 मो.- 9450825966, 7525825966

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक श्रीधर द्विवेदी द्वारा युग सत्य प्रिंटिंग प्रेस, शिवपुर वाराणसी उ0प्र0 से मुद्रित व शि.15/137 भरलाई शिवपुर, वाराणसी (उ0प्र0) 221009 से प्रकाशित।

RNI No - UPHIN/2012/41296

भीतर के पन्नों पर

विचार बिन्दु :
हिंदी साहित्य : सत्ता, समाज और संवेदना... 2

कवर स्टोरी :
विनोद कुमार शुक्ल : एक धीमी... 3-7
ज्ञानरंजन ने हिन्दी साहित्य की दुनिया... 8-9
विरेन्द्र यादव : हिन्दी में परिवर्तनकारी... 10-11

कहानी
प्रेम समाधि में योगेश्वर 12-14

आलेख
बेटियों के प्रति... 15

लघुकथा
बिना कुछ छोड़े... 16
वीना सिंह की दो लघुकथाएं 17

कविता
अशोक सिंह की कविताएं 18
योगेन्द्र पाण्डेय की कविताएं 19

पुस्तक समीक्षा
संस्कृति समाज और हम... 21-23
सुन्दरकाण्ड रहस्य मिमांसा 24
अन्तर्ध्वनि 25-26

स्मृति शेष
सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' 27
कस्तूरबा गाँधी 28

मुद्दा
भारत-बांगलादेश द्विपक्षीय... 29-30

प्रेरक व्यक्तित्व
एक अधिकारी ऐसा भी... 31

पर्यटन
जगन्नाथपुरी के दर्शन 32

ब्यूटी फैशन
फलों के छिलके देंगे ग्लो 33

खेती-बाड़ी
राजस्थान में प्राकृतिक खेती 34
सरसों की उपज बढ़ाने का... 35

वास्तु 36

स्वास्थ्य-
रोजे में अपनायें ये डाएट प्लान 37
फैटी लिवर का रामबाण इलाज 38

खेल-खिलाड़ी 39

सिने-जगत 40

पाठकों से– पत्रिका के लिए आपके प्रतिक्रिया, सुझाव, विचार आमंत्रित हैं। ई मेल–gaongiraw@gmail.com पर भेजें। – सम्पादक

नोट– पत्रिका में प्रकाशित लेख, विचार लेखकों के अपने हैं, सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका में दिये गये पद अवैतनिक हैं। समस्त विवादों का न्यायक्षेत्र वाराणसी न्यायालय क्षेत्र में ही मान्य होगा।

हिंदी साहित्य : सत्ता, समाज और संवेदना के बीच चलती एक जीवन्त परंपरा

प्रगतिवाद के दौर में हिंदी साहित्य ने स्पष्ट रूप से शोषित वर्ग का पक्ष लिया। मुंशी प्रेमचंद के कथा साहित्य में किसान, मज़दूर और स्त्री पहली बार केंद्र में आए। यह साहित्य सत्ता से सवाल करता था और समाज में बदलाव की मांग करता था। स्वतंत्रता आंदोलन के समय साहित्य और राजनीति के बीच एक सकारात्मक संवाद बना। साहित्य को नैतिक बल मिला और राजनीति को वैचारिक दिशा।

हिंदी साहित्य की यात्रा किसी राजकीय आदेश, अकादमिक योजना या सत्ता-प्रायोजित अभियान का परिणाम नहीं रही है, बल्कि यह यात्रा जनता की ज़रूरतों, संवेदनाओं और संघर्षों से उपजी है। हिंदी साहित्य का इतिहास दरअसल भारतीय समाज के बदलते चेहरे, उसकी पीड़ा, उसकी आस्था और उसके प्रतिरोध का इतिहास है। यह साहित्य जब-जब जनता के साथ खड़ा हुआ, तब-तब उसने कालजयी रूप लिया और जब-जब वह सत्ता, दरबार या सुविधा का मोहताज बना, तब-तब उसका प्रभाव सीमित होता चला गया।

हिंदी साहित्य को वास्तविक पहचान भक्तिकाल में मिली। चौदहवीं से सत्रहवीं शताब्दी के बीच साहित्य ने न केवल भाषा बदली, बल्कि दृष्टि भी बदली। यह वह समय था जब समाज जाति, धर्म, पाखंड और असमानता से जूझ रहा था। इसी पृष्ठभूमि में संत कवियों का उदय हुआ। निर्गुण भक्ति धारा के संतों ने ईश्वर को मंदिर-मस्जिद से बाहर निकालकर मनुष्य के भीतर स्थापित किया। कबीर की वाणी सत्ता, धर्म और सामाजिक व्यवस्था तीनों के लिए चुनौती थी। उन्होंने साफ कहा कि अगर ईश्वर चाहिए तो पहले इंसान बनना होगा। इसी परंपरा में रैदास जैसे कवि आए, जिन्होंने श्रम और समानता को गरिमा दी।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में हिंदी साहित्य ने एक बार फिर करवट ली। अंग्रेज़ी शासन, मुद्रण तकनीक और राष्ट्रीय चेतना ने साहित्य को नई दिशा दी। आधुनिक हिंदी साहित्य का प्रारंभ समाज सुधार और राष्ट्रबोध के साथ हुआ। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी को केवल कविता की भाषा नहीं रहने दिया, बल्कि उसे पत्रकारिता, नाटक और सामाजिक विमर्श का माध्यम बनाया। पहली बार साहित्य ने खुलकर गुलामी, अंधविश्वास और सामाजिक कुरीतियों पर सवाल उठाए।

प्रगतिवाद के दौर में हिंदी साहित्य ने स्पष्ट रूप से शोषित वर्ग का पक्ष लिया। मुंशी प्रेमचंद के कथा साहित्य में किसान, मज़दूर और स्त्री पहली बार केंद्र में आए। यह साहित्य सत्ता से सवाल करता था और समाज में बदलाव की मांग करता था। स्वतंत्रता आंदोलन के समय साहित्य और राजनीति के बीच एक सकारात्मक संवाद बना। साहित्य को नैतिक बल मिला और राजनीति को वैचारिक दिशा।

आज का हिंदी साहित्य एक विचित्र दौर से गुजर रहा है। मंच पहले से कहीं अधिक हैं। डिजिटल मीडिया, सोशल प्लेटफॉर्म, वेब पत्रिकाएँ । लेकिन लेखक की आर्थिक और सामाजिक स्थिति कमजोर है। सत्ता साहित्य को सहन तो करती है, लेकिन उसे संरक्षण नहीं देती। पुरस्कार और अकादमियाँ विवादों में हैं और साहित्यिक हस्तक्षेप सीमित होता जा रहा है। इसके बावजूद हिंदी साहित्य जीवित है, क्योंकि आज भी ऐसे लेखक हैं जो बिना संरक्षण, बिना संसाधन, केवल प्रतिबद्धता के सहारे लिख रहे हैं। हिंदी साहित्य का इतिहास हमें यही सिखाता है कि साहित्य का अस्तित्व सत्ता की कृपा पर नहीं, समाज की स्वीकार्यता पर टिका होता है। जब साहित्य जनता की आवाज़ बनता है, तब वह अमर होता है। आज ज़रूरत है कि हिंदी साहित्य फिर से अपने मूल स्वभाव की ओर लौटे।सवाल पूछने वाला, असहज करने वाला और सच बोलने वाला। क्योंकि जब तक भाषा सवाल पूछती रहेगी, तब तक समाज जीवित रहेगा और हिंदी साहित्य भी।

सांस्कृतिक जगत की दिग्गज हस्तियों की चले जाने से सन्नाटा पसरा है। सांस्कृतिक क्षेत्र अपने निर्माताओं के बिना सूना हो गया है हाल के दिनों में विनोद कुमार शुक्ल, सच्चिदानन्द सिन्हा, राजेन्द्र कुमार, ज्ञानरंजन, वीरेन्द्र यादव, राजी सेठ, नासिर अहमद सिकंदर आदि इस दुनिया को अलविदा कह गये हैं। राजेन्द्र कुमार सच्चे कवि थे और तमाम कवियों के संरक्षक थे। उन्होंने पहले देह दान किया और फिर अंतिम यात्रा पर निकले। इसी क्रम में 90 वर्षीय पत्रकार मार्क टुली का नाम भी शामिल है। मार्क टुली का पत्रकारिता के क्षेत्र में महनीय योगदान है। उन्होंने कुंभ मेला पर एक पुस्तक भी लिखी है। यहाँ हम विनोद कुमार शुक्ल, ज्ञान रंजन और वीरेन्द्र यादव को विशेष रूप से याद कर रहे हैं। –सं.

विनोद कुमार शुक्ल- एक धीमी, अनंत कविता की अन्तिम लय

–कुमार मुकुल

संसार में रहते हुए/ मैं कभी घर लौट न सकूं/ बस संसार में रहूं/ जब संसार में न रहूं/ तब घर लौटूं/ और घर मुझसे खाली रहे.

छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में अब उनका घर सचमुच खाली है. यह खालीपन मात्र अनुपस्थिति नहीं, बल्कि एक उपस्थिति के चले जाने का बोध है.

बरसों-बरस तक साधारण जीवन की सबसे असाधारण व्याख्याओं के साक्षी रहे इस घर में, सन्नाटा पसरा हुआ है. अब इस घर में वह कभी लौट नहीं पाएंगे. रायपुर में उनके निधन के साथ ही हिन्दी का एक अध्याय समाप्त हो गया.

अभी कुछ दिन पहले ही तो जब इस घर में विनोद कुमार शुक्ल को भारत में साहित्य का सबसे बड़ा सम्मान ज्ञानपीठ दिया जा रहा था, उन्होंने अपनी एक कविता पढ़ी थी-

जागता हूँ तो सबकी नींद से/ सोता हूँ तो सबकी नींद में/ मैं अकेला नहीं/ मुझमें लोगों की भीड़ इकट्ठी है/ मुझे ढूँढो मत/ मैं सब लोग हो चुका हूँ/ मैं सबके मिल जाने के बाद/ आखरि में मिलूँगा/ या नहीं मिल पाया तो/ मेरे बदले किसी से मिल लेना.

लेकिन सच तो यही है कि किसी दूसरे से मिलना, दूसरे से मिलने की तरह होगा, विनोद कुमार शुक्ल से मिलने की तरह नहीं.

'सर्वश्रेष्ठ तो हमेशा लिखा जाना बचा हुआ है'

हिन्दी की एक पूरी पीढ़ी ने उनसे ही यह जाना कि जीवन में सबसे साधारण दृश्य

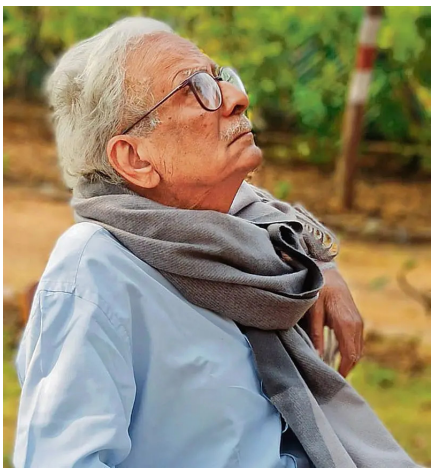

भी, कैसे असाधारण हो जाता है. उन पर लिखते हुए, पिछले कई दशकों की स्मृतियां इधर-उधर होने लगती हैं.

मैंने एक दिन पूछा कि पहली कविता की कोई स्मृति है?

वह पुराने दिनों में डूब गए थे, 'पहली कविता की कोई ऐसी स्मृति तो है नहीं. पहली कविता होते-होते, कई पहली कविताएं हो जाती हैं. लेकिन जिस तरह पहली कविता, पहली कविता न हो कर के, कुछ भी नहीं कविता होती है, उसी तरह से दूसरी कविता होती है, वो भी कुछ भी नहीं कविता होती है. मालूम नहीं, ऐसी कितनी कविताएं, कुछ भी नहीं कविताएं हो कर के रह गईं. लेकिन सामान्य तौर पर मैं मान लेता हूं अपने आप में कि जो सबसे पहले प्रकाशित हुई, वो पहली कविता हुई. और जो बाद में प्रकाशित हुई, वो दूसरी कविता हुई.'

वह कहते थे- 'पहली रचना तो लिखित में बची हुई कभी होती नहीं. जब लिखित में होने की प्रक्रिया होती है तो कोई दूसरी रचना, उस पहली रचना को खारिज कर देती है. खुद रचना को खारिज करना, हमेशा दूसरों के द्वारा खारिज होने से अपनी रचना को बचाने का एक तरीका होता है. और दूसरी रचना, जो किसी तरह से खारिज होने से बच जाती है, रह जाती है. तो पहली रचना तो कभी होती ही नहीं है. जितनी भी रचनाएं हैं, सब दूसरी रचनाएं हैं.'

65 सालों से भी अधिक समय से लिखते हुए भी वो कहते थे- 'मैं जब भी कोई नई कविता लिखता हूं तो पहली कविता की तरह ही लिखता हूं. अब भी मैं जो कविता लिखता हूं, तो मैं उसी तरह लिखता हूं, जैसे मैं पहली कविता लिख रहा हूं. कविता लिखते समय हर बार ज़ेहन में यही बात रहती है कि मैंने अपना सर्वश्रेष्ठ तो कभी नहीं लिखा. और कोई भी लिखने वाला, अपने जीवन में सर्वश्रेष्ठ कभी नहीं लिखता. सर्वश्रेष्ठ तो हमेशा लिखा जाना बचा हुआ है.'

यही उनके लिखे का रहस्य था. वे हर बार शुरुआत करते थे, जैसे अभी-अभी लिखना सीखा हो.

वह बताते थे, 'घर में लिखने का वातावरण था. संयुक्त परिवार था. माँ, जमालपुर जो कि अब बांग्लादेश में है; से नौ वर्ष की उम्र में अपने भाइयों के साथ कानपुर लौट कर आ गई थीं. उस नौ वर्ष की उम्र में वे बंगाल का संस्कार, जितना भी हो, एक पोटली में बांध कर ले आई थीं. और वही

पोटली हर बार मेरे सामने खुल जाती थी. मैंने उन्हीं से रवींद्रनाथ टैगोर, शरतचंद्र और बंकिम के नाम सुने.'

मुक्तिबोध और पहली कविता

उनकी जीवन-कथा में हिन्दी के बड़े कवि, गजानन माधव मुक्तिबोध का स्थान व्यक्तिगत भी था और साहित्यिक भी. राजनांदगांव में मुक्तिबोध से हुई पहली भेंट की स्मृति विनोद कुमार शुक्ल की आवाज़ में झिलमिलाती थी.

वह कहते थे, 'वही तो एक ऐसी याद है, जो लगता है कि मुझमें ठहर गई है. मैं मुक्तिबोध को, तब के पहली बार के देखे हुए को, अभी तक उसी तरह याद करता हूं. मैं तब के मुक्तिबोध के सामने जिस तरह और जैसा था, मैं अब भी उनको याद करते हुए अपने आप को उसी तरह से महसूस करता हूं.'

विनोद जी बताते थे, 'जब मैं मुक्तिबोध से मिलने के लिए गया तो शाम का समय था, उन्होंने कहा- आता हूं. फिर उसके बाद वह आए. एक धुंधलका सा अंधेरा हो चुका था, लेकिन कुछ पहले की तैयारी में और कुछ उस धुंधलके की तैयारी में वो एक जलता हुआ कंदील लेकर आए. उस जलते हुए कंदील के साथ ऐसा लगता था, जैसे किसी के साथ कुत्ता दुम हिलाते हुए चलता है. उस कंदील के उजाले में मुक्तिबोध आए और मेरी उनसे मुलाक़ात हुई.'

मुक्तिबोध ने ही विनोद कुमार शुक्ल की कविताओं को सबसे पहले दिल्ली के 'कृति' पत्रिका के संपादक श्रीकांत वर्मा तक पहुँचाया. उन्हीं आठ कविताओं का प्रकाशन, विनोद कुमार शुक्ल के लिए 'पहली कविता' बनकर उभरीं.

उन्हें मुक्तिबोध की सुनाई गई पहली कविता की भी याद हमेशा बनी रही, 'मुक्तिबोध ने पहली बार मुझे अपनी कविताएँ पढ़कर सुनाईं. उस दिन घर पहुँचते-पहुँचते देर हो चुकी थी. उनमें से एक कविता आकाश के बारे में एक लंबी कविता थी. ऐसा लग रहा था मानो समय की डोर से बँधी कोई पतंग, दुनिया के ऊपर उड़ रही हो और उसे खूब डोर दी गई हो. मुक्तिबोध ने कविता पढ़कर मुझे डोरी थमा दी. कविता खत्म हो गई थी, पर अभी खत्म नहीं हुई थी. अभी भी नहीं हुई है.'

एक ही रचना, जो जीवन की तरह फैलती गई

विनोद कुमार शुक्ल कहते थे, 'ज़िंदगी एक है. बस वही बार-बार अलग रूप में लिखी जाती है.'

उन्हें ध्यान से पढ़ते हुए, यह बात थोड़ी साफ होती है कि उनकी कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास, सब एक ही साँस की भिन्न लय हैं. 'नौकर की कमीज़' में वही आदमी है जो 'लगभग जय हिन्द' की कविता में है, थोड़ा संकोची, थोड़ा खोया हुआ लेकिन जो अपने मनुष्य होने को बचाते हुए नज़र आता है.

उन्होंने एक बातचीत में कहा था- 'ज़िंदगी एक है और हम अपनी ज़िंदगी के अनुभव को आगे-पीछे तो कर सकते हैं लेकिन उसको पूरी तरह से हटा तो नहीं सकते हैं. तो ये एक सिलसिला है. अगर एक ज़िंदगी मिली है तो एक ज़िंदगी का पाया हुआ जो अनुभव है, वही लिखे में दर्ज़ होता है. असल में लिखा हुआ सारा कुछ जो है, हमारा भोगा हुआ होता है. संदर्भ जैसे पूरा संसार बाहरी होता है, दूसरे लोग होते हैं, दूसरे लोगों के साथ में हम होते हैं. हम लोग की तरह, मैं एक अकेला दूसरों की बातों को महसूसता हूं. तो मैंने जो लिखा, एक ज़िंदगी का लिखा, तो एक ही लिखा, ऐसा मान कर के चलना चाहिए. किसी को कविता के रूप में लिख दिया, किसी को कहानी के रुप में लिख दिया. किसी को उपन्यास के रूप में लिख दिया.'

वह हमेशा 'घर' लौटने की बात करते थे पर घर उनके लिए कोई पता नहीं था, एक भावना थी. वे रायपुर में रहते थे लेकिन अपने शहर राजनांदगांव का घर जैसे हमेशा, उनके साथ ही रहता था. वो कहते थे कि दिल्ली में भी सो कर उठता हूं तो सुबह का सूरज राजनांदगांव के सूरज की तरह लगता है.

अभी महीने भर पहले पूछा- राजनांदगांव लौटने का मन नहीं करता ? उन्होंने धीरे से कहा-'बहुत मन करता है. लेकिन अब वह मेरा राजनांदगांव नहीं रहा. अब कोई ट्रेन राजनांदगांव नहीं जाती.'

एक बातचीत में मैंने उनके लिखे हुए कुछ वाक्य निकाले थे- घर बाहर जाने के लिए उतना नहीं होता जितना लौटने के लिए होता है....और....घर का हिसाब किताब इतना गड़बड़ है/ कि थोड़ी दूर पैदल जाकर घर की तरफ लौटता हूँ/ जैसे पृथ्वी की तरफ....और ....घर-बार छोड़कर संन्यास नहीं लूंगा/ अपने संन्यास में/ मैं और भी घरेलू रहूंगा/ घर में घरेलू/ और पड़ोस में भी....और....दूर से घर देखना चाहिए.

मैंने पूछा- आपकी रचनाओं को पढ़ते हुए लगता है कि घर एक राग की तरह है. घर के साथ ये किस तरह का रिश्ता है ?

उनका जवाब था, 'अब इसको आप इस तरह कह लें कि मैं घरघुसना रहा. शायद मेरे लिए शुरुआत में घर में घुसे रहने की आदत बचपने के असुरक्षित होने के कारण ज्यादा रही होगी. क्योंकि जो लोग जंगलों में रात गुज़ारते हैं, वो अपने बचाव के लिए पेड़ की उंचाई पर आश्रय लेते हैं. और यह भी कि शिकारी भी मंच, पेड़ पर बनाता है. घर में संयुक्त परिवार के साथ मैं संसार को समझ रहा था. पिता की मृत्यु बचपने में ही हो गई थी. मेरा मंच, मेरा घर रहा है और यह जान बचाने के लिए घर में घुस जाने जैसा रहा होगा. जीने के लिए घर से निकल जाना जैसा भी.'

छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव में जिस दिन कृष्णा टॉकिज की शुरुआत हुई थी, उसी दिन विनोद कुमार शुक्ल का जन्म हुआ था. लेकिन पुरानी परंपरा की तरह, उनकी जन्मतिथि 1 जनवरी दर्ज कर दी गई और

साल था 1937. बचपन में ही पिता नहीं रहे और संयुक्त परिवार में पले-बढ़े. मां से लिखने-पढ़ने का संस्कार मिला. बातचीत में अक्सर अपनी अम्मा का ज़िक्र करते. उनकी कुछ चिट्ठियां संभाल कर रखी थी.

कहते थे-'अभी भी मिल जाती है, तो उसे आज मिली चिट्ठी की तरह पढ़ता हूं.'

जादुई यथार्थ और यथार्थ का जादू

44 प्रतिशत अंकों के साथ मैट्रिक पास करने के बाद वह रायपुर के साइंस कॉलेज में दाखलि़ हुए. इसके बाद कृषि की पढ़ाई की और ग्वालियर में कुछ दिनों नौकरी करने के बाद 1966 में रायपुर आ गये. तब रायपुर भी मध्य प्रदेश का ही हिस्सा था. बरसों कृषि विश्वविद्यालय में अध्यापन किया और वहीं से सेवानिवृत्त हुए. इन सबके बीच कविता, कहानी, उपन्यास लिखना जारी रहा.

विनोद कुमार शुक्ल की स्मृति-दुनिया किसी साधारण डायरी जैसी नहीं, किसी पुराने घर में बंद एक विशाल संदूक जैसी थी, जिसमें कई दृश्य, आवाज़ें, और अनगिनत अनजान चेहरे सुरक्षित थे. उनकी रचनाओं में कई अनुभव समय के बाहर चलते दिखाई देते हैं. कुछ भविष्य से आए हुए, कुछ बहुत पीछे छूटे अतीत से.

वे खुद कहते थे- 'मैं अपनी यादों की संदूक से कुछ-कुछ निकालता जाता और उसे दर्ज करता जाता हूं. नामालूम उनमें कितनी यादें हैं.'

उनका पहला कविता-संग्रह 'लगभग जय हिन्द' 1971 में प्रकाशित हुआ,

जिसके साथ ही उनकी विशिष्ट भाषिक बनावट, चुप्पी और भीतर तक उतरती संवेदनाएं हिन्दी कविता के परिदृश्य में दर्ज हो गई. इसके बाद 'वह आदमी चला गया नया गरम कोट पहिनकर विचार की तरह', 'सब कुछ होना बचा रहेगा', 'अतिरिक्त नहीं', 'कविता से लंबी कविता', 'आकाश धरती को खटखटाता है', 'कभी के बाद अभी', जैसे संग्रहों ने उन्हें समकालीन हिंदी कविता के सबसे मौलिक स्वरों में शामिल कर दिया.

1979 में प्रकाशित उनके पहले उपन्यास 'नौकर की कमीज' ने हिन्दी कहानी और उपन्यास की धारा को एक अलग मोड़ दिया. इस उपन्यास पर बाद में मणि कौल ने फिल्म भी बनाई.

'खिलेगा तो देखेंगे' और 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' साधारण यथार्थ के समानांतर चलते हैं. वहाँ चमत्कार भी है और साधारण के भीतर से जो चमक निकलती है, वह जादू भी. यथार्थ और कल्पना, उनके लिखे में इतने गहरे घुलते हैं कि पाठक के लिए उन्हें अलग करना लगभग असंभव हो जाता है. 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' में रघुवर प्रसाद का साधु के साथ हाथी पर बैठकर महाविद्यालय जाना, भले पाठक को अजीब कल्पना लगे, पर रायपुर के लोग जानते हैं, विनोद कुमार शुक्ल स्वयं अपने नौकरी के दिनों में, कई बार साधु के साथ, हाथी पर बैठकर कृषि विश्वविद्यालय जाया करते थे.

अपने उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने लोकआख्यान, स्वप्न, स्मृति, मध्यवर्गीय जीवन और मनुष्य की जटिल आकांक्षाओं को एक विशिष्ट कथा-शिल्प में रूपांतरित किया.

लेकिन वे केवल सपनों के कवि या कथाकार नहीं बने रहे. बस्तर के आदिवासियों, किसानों की आत्महत्या, नक्सल संघर्ष, पलायन, इन सब पर उन्होंने खूब लिखा. लेकिन इस लिखे में वे आंकड़ों या नारों की भाषा से दूर रहे. उनकी कविताओं में, कहानियों में और उपन्यास में भी नारेबाजी अनुपस्थित है. वे प्रचलित अर्थों में राजनीति से ज़रूर दूर दिखे, पर उनके लिखे में एक नैतिक राजनीति दिखाई पड़ती है, जो मनुष्य के पक्ष में और धरती के पक्ष में खड़ी है.

वह ऐसे व्यक्ति की तरह बोलते रहे, जो अंधेरे समय में भी धीमी आवाज़ में सच कहता रहता है. आदिवासियों की बेदखली, खनिजों की लालसा, जल-जंगल-जमीन पर कब्ज़ा, यह सब उनके यहाँ इस तरह दर्ज है कि पाठक खुद को उन्हीं कतारों में खड़ा पाता है, जिन्हें इतिहास हाशिए पर धकेलता रहा है.

'आदिवासी! हांका पड़ा है' जैसी कविता में जंगल का भय, राज्य की हिंसा और विस्थापन की असहायता, सब कुछ दर्ज होता जाता है. वहाँ आदिवासी केवल 'नक्सली' या 'अपराधी' नहीं, बल्कि भूखे, विस्थापित और जीने की जिद से भरे मनुष्य हैं. उनकी कविताएँ पाठक से कठोर प्रश्न पूछती हैं कि जिनके पास छुपाने को कुछ नहीं, उन्हें ही संदेह और दमन का सबसे बड़ा निशाना क्यों बनाया जाता है?

'एक पूर्व में बहुत से पूर्व' जैसे संग्रह से समझना मुश्किल नहीं है कि वे सामाजिक अंधेरे को कितनी गंभीरता से महसूस करते थे. 'बहुत सी रातों की एक जुटी रात', 'तारों-चाँद के निकलने को भूल गए लोग', जैसी कविताएं, केवल निजी उदासी नहीं, हमारे समय की घनी परतें हैं.

वे दुनिया के सभी घरों के लिए अपनी किताबें समर्पित करते हैं, ताकि 'खुशी सबकी बनी रहे'. यह उनके मानवीय सरोकारों का विस्तार है.

इधर के वर्षों में बच्चों के लिए लिखी गई कहानियां और उपन्यास, 'हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी', 'गमले में जंगल', 'यासि रासा त' ने पारंपरिक बाल-साहित्य की सीमाओं को तोड़ा. यहाँ बच्चा पाठक नहीं, बराबरी का सह-खोजी है, जिसके भीतर की जिज्ञासा और बेचैनी को विनोद कुमार शुक्ल ने सम्मान से ग्रहण किया.

दुनिया की कई भाषाओं में, अंग्रेजी से लेकर हिब्रू तक, उनके लिखे के अनुवाद हुए. युद्ध, हिंसा और असुरक्षा में जी रहे लोगों ने उनकी कविताओं में सांत्वना ढूंढ़ी. यह बताता है कि रायपुर का यह संकोची कवि केवल हिंदी का लेखक नहीं, मानवीय आत्मा का लेखक था.

ज्ञानपीठ, एशिया का पहला पेन नोबाकोव, साहित्य अकादमी, जैसे सम्मान और पुरस्कार, ये सब उनके नाम के आसपास चमकते रहे, पर उनकी असली रोशनी उनके कथ्य की अद्भुत सादगी और मानवीय गरिमा में बनी रही, जिसमें वो अंतिम दिनों में भी डूबे रहे.

लगभग 90 साल की उम्र में, पिछले महीने भी उन्होंने चार कहानियां लिखीं. अस्पताल में भर्ती रहे, तब भी लिखने का सिलसिला बंद नहीं हुआ. यहां तक कि 2 दिसंबर को जब उन्हें रायपुर के एम्स में भर्ती किया गया, वहां भी सप्ताह भर बाद, उन्होंने एक कविता लिखी.

एक बार बातचीत में उन्होंने कहा- 'कहने के लिए पूरी जिंदगी बची होती है. और बिना कहे बात जारी है. पर कविता टुकड़ों-टुकड़ों में होती है. पूरी जिंदगी भर की टुकड़ों-टुकड़ों की कविताएं, एक ही जिंदगी की केवल एक ही कविता होती है और मैं वही कविता लिखता रहता हूं, बहुत संकोच के साथ, पहली बार लिख रही किसी कविता की तरह.'

विनोद कुमार शुक्ल अपनी कविताओं में कभी पूर्ण विराम का उपयोग नहीं करते थे. पूर्ण विराम उन्हें अनावश्यक लगता था क्योंकि वह तय कर देता है कि कहने के लिए कुछ नहीं बचा, जबकि विनोद कुमार शुक्ल के लिए 'सब कुछ होना बचा रहेगा' जीवन में ही नहीं, भाषा में भी एक स्थायी भाव की तरह था.

अब जब वो नहीं हैं तो भाषा के भीतर नहीं, हमारी स्मृति और अकेलेपन के बीच, पहली बार एक पूर्ण विराम की जगह बन गई है.

विनोद कुमार शुक्ल का रचना संसार

–हर्षवर्धन

विनोद कुमार शुक्ल (1 जनवरी 1937 - 23 दिसंबर 2025) एक हिंदी साहित्यकार थे जिन्हें हिंदी साहित्य में उनके अनूठे और सादगी भरे लेखन के लिए जाना जाता है। शुक्ल ने उपन्यास एवं कविता विधाओं में साहित्य सृजन किया है। उनका पहला कविता संग्रह 1971 में लगभग जय हिन्द नाम से प्रकाशित हुआ। 1979 में नौकर की कमीज़ नाम से उनका उपन्यास आया जिस पर फ़िल्मकार मणिकौल ने इसी से नाम से फिल्म भी बनाई। शुक्ल के दूसरे उपन्यास दीवार में एक खिड़की रहती थी को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

सन 2024 में उन्हें भारतीय साहित्य के सर्वोच्च सम्मान ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

1 जनवरी 1937 को भारत के राज्य मध्यप्रदेश (अब छत्तीसगढ़) के राजनांदगांव में जन्मे शुक्ल ने प्राध्यापन को रोज़गार के रूप में चुनकर अपना पूरा ध्यान साहित्य सृजन में लगाया।

विनोद कुमार शुक्ल हिंदी कविता के वृहत्तर परिदृश्य में अपनी विशिष्ट भाषिक बनावट और संवेदनात्मक गहराई के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने समकालीन हिंदी कविता को अपने मौलिक कृतित्व से सम्पन्नतर बनाया है और इसके लिए वे पूरे भारतीय काव्य परिदृश्य में अलग से पहचाने जाते हैं।

उनकी एकदम भिन्न साहित्यिक शैली ने परिपाटी को तोड़ते हुए ताज़ा झोकें की तरह पाठकों को प्रभावित किया, जिसको 'जादुई-यथार्थ' के आसपास की शैली के रूप में महसूस किया जा सकता है।

वे कवि होने के साथ-साथ शीर्षस्थ कथाकार भी हैं। उनके उपन्यासों ने भी हिंदी में एक मौलिक भारतीय उपन्यास की संभावना को राह दी है। उन्होंने एक साथ लोकआख्यान और आधुनिक मनुष्य की अस्तित्वमूलक जटिल आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति को समाविष्ट कर एक नये कथा-ढांचे का आविष्कार किया है। अपने उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने हमारे दैनंदिन जीवन की कथा-समृद्धि को अद्भुत कौशल के साथ उभारा है। मध्यवर्गीय जीवन की बहुविध बारीकियों को समाये उनके विलक्षण चरित्रों का भारतीय कथा-सृष्टि में समृद्धिकारी योगदान है। वे अपनी पीढ़ी के ऐसे अकेले लेखक हैं, जिनके लेखन ने एक नयी तरह की आलोचना दृष्टि को आविष्कृत करने की प्रेरणा दी है। आज वे सर्वाधिक चर्चित लेखक हैं। अपनी विशिष्ट भाषिक बनावट, संवेदनात्मक गहराई, उत्कृष्ट सृजनशीलता से श्री शुक्ल ने भारतीय वैश्विक साहित्य को अद्वितीय रूप से समृद्ध किया है।

प्रमुख कृतियां

कविता संग्रह

'लगभग जयहिंद ' वर्ष 1971

वह आदमी चला गया नया गरम कोट पहिनकर विचार की तरह' वर्ष 1981.

सब कुछ होना बचा रहेगा ' वर्ष 1992.

अतिरिक्त नहीं ' वर्ष 2000.

कविता से लंबी कविता ' वर्ष 2001.

आकाश धरती को खटखटाता है ' वर्ष 2006.

पचास कविताएँ' वर्ष 2011

कभी के बाद अभी ' वर्ष 2012.

कवि ने कहा ' -चुनी हुई कविताएँ वर्ष 2012.

प्रतिनिधि कविताएँ ' वर्ष 2013.

उपन्यास
' नौकर की कमीज़ ' वर्ष 1979.
' खिलेगा तो देखेंगे ' वर्ष 1996.
' दीवार में एक खिड़की रहती थी ' वर्ष 1997.
' हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बौना पहाड़ ' वर्ष 2011.
' यासि रासा त ' वर्ष 2016
' एक चुप्पी जगह' वर्ष 2018.
कहानी संग्रह
पेड़ पर कमरा ' वर्ष 1988.
महाविद्यालय ' वर्ष 1996.
एक कहानी ' वर्ष 2021.
घोड़ा और अन्य कहानियाँ ' वर्ष 2021.

कहानी/कविता पर पुस्तक

'गोदाम', वर्ष 2020.
'गमले में जंगल', वर्ष 2021.
कृतियों के अनुवाद
'The Servant's Shirt', Year 1999 (Novel)
'A Window Lived In The Wall', Year 2005 (Novel)
'Once It Flowers', Year 2014 (Novel)
'Moonrise From The green Grass Roof', Year 2017 (Novel)
'Blue Is Like Blue' Year 2019 (Stories Collection)
'The Windows In Our House Are Little Doors' Year 2020 (Novel)

उपन्यास ' नौकर की कमीज़ ' का फ्रेंच सहित प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद/प्रकाशन।

उपन्यास ' दीवार में एक खिड़की रहती थी ' का प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद/प्रकाशन।

कविताओं का एक संग्रह इतालवी में ।

कविताओं के स्वीडिश, जर्मन, अरबी, अंग्रेजी सहित प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद।

पेड़ पर कमरा ' कहानी संग्रह का मराठी, अंग्रेजी में अनुवाद

अन्य कृतियाँ

बच्चों की कविताओं के पोस्टकार्ड प्रकाशित, वर्ष 2020.

सम्मान एवं पुरस्कार

गजानन माधव मुक्तिबोध फेलोशिप ' (म.प्र. शासन)
रज़ा पुरस्कार ' (मध्यप्रदेश कला परिषद)
शिखर सम्मान ' (म.प्र. शासन)
राष्ट्रीय मैथिलीशरण गुप्त सम्मान ' (म.प्र. शासन)
दयावती मोदी कवि शेखर सम्मान' (मोदी फाउंडेशन)
साहित्य अकादमी पुरस्कार', (भारत सरकार)
हिन्दी गौरव सम्मान' (उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, उ.प्र. शासन)
मातृभूमि' पुरस्कार, वर्ष 2020 (अंग्रेजी कहानी संग्रह ँत्ल ध्र थ्व ँत्ल' के लिए)

साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के सर्वोच्च सम्मान 'महत्तर सदस्य' चुने गये, वर्ष 2021.

2024 का 59वां ज्ञानपीठ पुरस्कार समग्र साहित्य पर दिया गया।

कृतियों पर कार्य

उपन्यास ' नौकर की कमीज़ ' एवं कहानी 'बोझ' पर विख्यात फिल्मकार मणिकौल द्वार फिल्म का निर्माण वर्ष 1999. फिल्म 'केरल अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह ' में पुरस्कृत।

कहानियाँ 'आदमी की औरत' एवं 'पेड़ पर कमरा' पर राष्ट्रीय फिल्म इंस्टीट्यूट, पूना द्वारा अमित दत्ता के निर्देशन में फिल्म का निर्माण। फिल्म वेनिस अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह 2009 में 'स्पेशल मेनशन अवार्ड' से सम्मानित।

उपन्यास ' दीवार में एक खिड़की रहती थी' पर प्रसिद्ध नाट्य निर्देशक मोहन महर्षि सहित अन्य रचनाओं पर निर्देशकों द्वारा नाट्य मंचन।

अन्य उपलब्धियाँ

निराला सृजन पीठ ', भारत भवन, भोपाल में रहे थे।

साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के सदस्य रहे।

वर्ष अप्रैल 2013 से अप्रैल 2014 में वे 'अतिथि लेखक (राइटर इन रेसीडेंस), महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र,.

वर्ष 2023 का पैन-नाबोकोव पुरुस्कार मिला है !

ज्ञानरंजन ने हिंदी साहित्य की दुनिया को किस प्रकार आकार दिया?

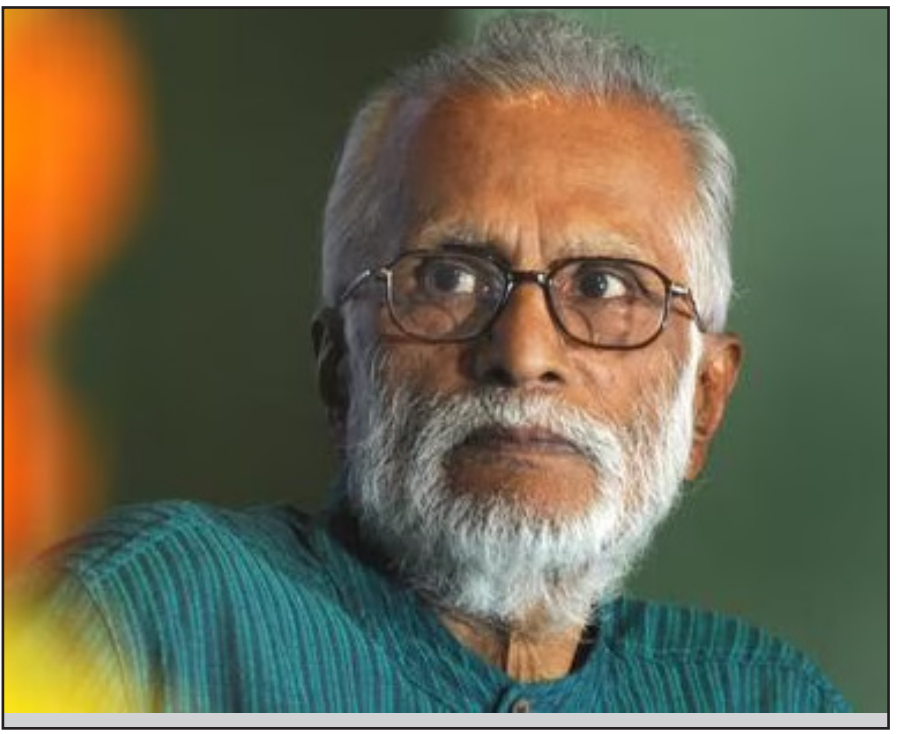

–मुकुल यादव

ज्ञानरंजन के चले जाने से इन शहरों से जुड़े सांस्कृतिक इतिहास और आधुनिक स्मृति का एक हिस्सा अचानक अंधकार में डूब गया है।

8 जनवरी की देर शाम मुझे पता चला कि ज्ञानरंजन (उनके अधिकांश मित्र उन्हें ज्ञान भाई कहते थे) का निधन पिछले दिन हो गया। वे 90 वर्ष के थे और काफी कमजोर हो चुके थे। पिछले नवंबर में, जब हमने उनके स्वास्थ्य के बारे में बात की, तो उन्होंने अचानक कहा कि वे अपनी अपेक्षा से अधिक जी चुके हैं, अपनी इच्छा से अधिक देख चुके हैं, और एकमात्र लाभ यह है कि 'मेरे शत्रु जानते हैं कि मैं अभी भी जीवित हूँ'। जब मैंने पूछा कि वे शत्रु कौन हो सकते हैं, तो वे हँसे और बोलेः 'पुराने दोस्त! और कौन हो सकते हैं?'

इलाहाबाद और जबलपुर पर कुछ समय से प्रकाश मंद पड़ रहा था, और ज्ञानरंजन के चले जाने से इन शहरों से जुड़े सांस्कृतिक इतिहास और आधुनिक स्मृति का एक हिस्सा अचानक अंधकार में डूब गया है। अब कोई ऐसा नहीं बचा जो ज्ञानरंजन द्वारा अधूरे छोड़े गए कई रहस्यों को उजागर कर सके या सवालों के जवाब दे सके।

वे हिंदी लेखकों की उस पीढ़ी के सबसे प्रसिद्ध चेहरे थे, जिन्होंने 1960 के बाद के दौर में साहित्यिक जगत में नए विषय और कथा शैली का परिचय दिया। ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह, काशीनाथ सिंह, रवींद्र कालिया, महेंद्र भल्ला और विजय मोहन सिंह अपने साथ विद्रोह की भावना लेकर आए थे। उनकी भाषा तीखी, बेबाक, सरल और आकर्षक रूप से व्यंग्यात्मक थी। सामाजिक और व्यक्तिगत संबंधों में उभरते तनाव, परित्याग की भावना, मोहभंग, युवा पीढ़ी का अकेलापन, अस्तित्व संबंधी चिंता और कुंठा प्रमुख विषय के रूप में उभर कर सामने आते हैं। यह सब गांधीवादियों और प्रगतिवादियों की पिछली पीढ़ियों के नीरस यथार्थवाद, सच्चिदानंद वत्स्यायन की 'अज्ञेय' की अमूर्त, हल्की और कृत्रिम गद्य शैली और निर्मल वर्मा जैसे लेखकों की कलात्मक गीतात्मकता से एक बड़ा बदलाव था।

यह एक ऐसी पीढ़ी थी जिसने हर रूप में बनावटीपन का विरोध किया। उनका सामूहिक योगदान वामपंथी विचारधारा से जुड़ा था, लेकिन उनमें से अधिकांश लोग राजनीतिक रूप से सही मायने में वामपंथी नहीं थे। यह निर्णय उन्होंने बाद में लिया। लेकिन उनका प्रभाव अपने समय की साहित्यिक सीमाओं, रुझानों और विचारधाराओं में व्यापक था। उनके समकालीन उन्हें समान रूप से प्यार और भय दोनों देते थे।

ज्ञानरंजन की लघु कथाएँ जैसे घंटा , पिता , बहिरगमन , बाड़ के इधर और उधर, दूधनाथ सिंह (रक्तपात , ऋच्छ), काशीनाथ सिंह (लोग बिस्तरों पर) और रवींद्र कालिया (नौ साल छोटी पटन) की रचनाओं के साथ युग-निर्धारक मानी जाती हैं। इनमें से कई लेखकों ने आगे चलकर

उपन्यास और साहित्यिक आलोचना की रचनाएँ कीं। यदि इस पीढ़ी की किसी एक प्रतिष्ठित रचना का नाम लेना हो, तो वह निस्संदेह घंटा ही होगी ।

घंटा' में ज्ञानरंजन ने स्वतंत्रतोत्तर हिंदी लघु कथा साहित्य का शायद सबसे यादगार चरित्र कुंदन सरकार का सृजन किया। सरकार में एक उच्च अधिकारी कुंदन सरकार संस्कृति प्रेमी है और कलाकारों और लेखकों को अपने आसपास इकट्ठा करना पसंद करता है, जिनमें वे लोग भी शामिल हैं जिन्हें वह आम तौर पर समाज से अलग-थलग या निम्न वर्ग का मानता है। उसका उच्च पद उन लेखकों और विद्रोहियों को आकर्षित करता है जो सामाजिक सीढ़ी पर उससे कहीं नीचे हैं। उनमें से सभी उसके साथ तालमेल नहीं बिठाते, जिनमें असंतुष्टों का समूह और हाशिए पर रहने वाले लोग भी शामिल हैं। जिस जगह वे इकट्ठा होते हैं, उसे पेट्रोला कहा जाता है। साधारण सा दिखने वाला पेट्रोला सिर्फ असंतुष्टों का अड्डा नहीं है, बल्कि एक तरह का किला है - एक तरह की विभाजन रेखा। दूसरी ओर सत्ता, विशेषाधिकार और दिखावे की भ्रष्ट दुनिया है। यही कुंदन सरकार की दुनिया है।

कहानी का नायक, पेट्रोला समूह का एक सदस्य, किसी तरह सरकार के साथ घूमने-फिरने, मुफ्त शराब पाने और वर्ग भेद की सीमाओं को गहराई से जानने के प्रलोभन का विरोध नहीं कर पाता–संक्षेप में, उसका घंटा बन जाता है। यह कहानी उसके बढ़ते मोहभंग, विद्रोह और अंत में भयानक अपमान की है। जब वह अपनी प्रतिष्ठा खोने के बाद पेट्रोला लौटता है, तो उसके दोस्त बस हंसते हैं और एक तरह से उसका स्वागत करते हैं। कई फिल्म देखने वालों को रोमन पोलान्स्की की फिल्म चाइनाटाउन का अंतिम वाक्य याद होगाः 'भूल जाओ जेक, यह चाइनाटाउन है।' लेकिन यह घंटा लिखे जाने के एक दशक से भी अधिक समय बाद आया था । कई मायनों में, ज्ञान अपने समय से बहुत आगे थे।

ज्ञानरंजन और उनके मित्रों के निर्णायक साहित्यिक हस्तक्षेप के बाद हिंदी लघु कथा साहित्य का स्वरूप पूरी तरह बदल गया। लगभग एक दशक तक, उनकी सशक्त, निडर और कुशल गद्य शैली ने लघु कथा को हिंदी साहित्य की अग्रणी विधा बना दिया और कविता को उसके शीर्ष स्थान से हटा दिया। हालांकि, जब उनका दशक समाप्त हुआ, तब साहित्य में थकावट के लक्षण दिखाई देने लगे थे। ज्ञानरंजन स्वयं इसे पहचानने वाले पहले व्यक्ति थे। लेखन में उनकी रुचि कम होने लगी। न केवल उनकी प्रचंड और निरंतर रचनात्मकता का मंद पड़ना तय था, बल्कि उस समय के सामाजिक-राजनीतिक उथल-पुथल ने मध्यवर्गीय साहित्य जगत के अग्रणी लेखकों को धीरे-धीरे उनके साहित्यिक शिखर से नीचे गिरा दिया और उनकी दूरदृष्टि की सीमाओं को उजागर कर दिया। नक्सलबाड़ी कांड के बाद वामपंथी उग्रवाद की अदम्य शक्ति ने सांस्कृतिक परिदृश्य को बदल दिया। कई लेखक वामपंथ की ओर मुड़ गए।

ज्ञान हमेशा अथक परिश्रम करते थे। वे अपने प्रिय इलाहाबाद को छोड़कर जबलपुर के जीएस कॉलेज में शिक्षक के रूप में शामिल हो चुके थे। उन पर 'पहल' पत्रिका के प्रकाशन का दायित्व आ पड़ा , जो निस्संदेह स्वतंत्रतोत्तर भारत की सबसे महत्वपूर्ण और प्रभावशाली हिंदी साहित्यिक पत्रिका थी। आरंभ में उन्होंने वामपंथी शिक्षक और आलोचक कमला प्रसाद के साथ सह-संपादन किया और बाद में अकेले ही इसका संचालन किया। 1970 के दशक के उत्तरार्ध से पाठकों को ' पहल' की प्रति ज्ञानंजन की विशिष्ट लिखावट में लिखे पते के साथ मिलती थी। इसी लिखावट और उनके द्वारा लिखे गए पोस्टकार्डों ने पाठकों और लेखकों को उनसे घनिष्ठ, लगभग आत्मीय, संबंध स्थापित करने में मदद की। उनकी गर्मजोशी उन लोगों को भी स्पष्ट रूप से महसूस होती थी जो उनसे कभी नहीं मिले थे। उनका क्रोध भी। संपादक ज्ञानंजन ने लेखक ज्ञान को पीछे छोड़ दिया।

वे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे, लेकिन उन्होंने अपने वामपंथी विचारों को सहजता से व्यक्त किया और कभी भी पार्टी के कार्यकर्ता नहीं बने । वे एक वामपंथी उदारवादी और कुछ हद तक गांधीवादी मार्क्सवादी बने रहे, हालांकि 1960 के बाद के साहित्यिक विद्रोही और हिंदी कथा साहित्य के गुस्सैल विद्वान की छवि जीवन भर उनके साथ बनी रही। लगभग तीन पीढ़ियों के लेखकों ने लगभग 35 वर्षों तक ज्ञानरंजन और पहल के साथ काम किया , जब तक कि वे स्वयं अत्यधिक थक नहीं गए और अपनी पत्रिका के 90 अंक प्रकाशित करने के बाद इसे बंद करने का निर्णय लिया। उन्हें प्रकाशन फिर से शुरू करने के लिए राजी किया गया। 35 और अंक प्रकाशित होने के बाद, पत्रिका बंद हो गई। प्रतिष्ठित लेखक और महान साहित्यिक संपादक-कार्यकर्ता को कोई ऐसा व्यक्ति या समूह नहीं मिल सका जो उनके काम को आगे बढ़ा सके। उन्हें उनके अटूट धर्मनिरपेक्ष व्यक्तित्व और हिंदी सत्ता प्रतिष्ठान के साथ उनके आजीवन संघर्ष के लिए याद किया जाएगा। दुख की बात है कि पिछले पांच वर्षों में, हिंदी जगत ने अपने दो महानतम साहित्यिक संपादकों को खो दिया है (2020 में कोविड के कारण मंगलेश डबराल और 2026 में ज्ञानरंजन)। हमें उनके जैसे लोग फिर कभी देखने को नहीं मिलेंगे। ●

वीरेंद्र यादव : हिंदी में परिवर्तनकामी आलोचना के एक युग का अवसान

–अरुण नारायण

वीरेंद्र यादव का लेखन विपुल और बहुआयामी था। वे प्रगतिशील आंदोलन की उपज थे, लेकिन बहुजन लोकेशन से आने के कारण उन्होंने जातीय और वर्गीय गैर-बराबरी को जिस व्यापकता और जटिलता में चिह्नित किया, वैसा किसी सवर्ण आलोचक ने नहीं किया।

गत 16 जनवरी, 2026 को हिंदी के बहुचर्चित और हस्तक्षेपकारी आलोचक वीरेंद्र यादव का लखनऊ के एक अस्पताल में हृदयाघात के कारण निधन हो गया। पचहत्तर वर्ष की आयु कोई कम नहीं होती, लेकिन वीरेंद्र यादव की रचनात्मक त्वरा, बौद्धिक सक्रियता और वैचारिक स्फूर्ति को देखते हुए उनका यूं अचानक चला जाना हिंदी समाज के लिए एक स्तब्ध कर देने वाली घटना है। संयोग ही है कि इसी समय राजेंद्र कुमार, ज्ञानरंजन और प्रसिद्ध आंबेडकरवादी लेखक बुद्धशरण हंस का भी निधन हुआ। ये सभी अपने-अपने क्षेत्र में अत्यंत चर्चित और प्रभावशाली लेखक रहे, किंतु वृद्धावस्था और उससे जुड़ी शारीरिक व्याधियों ने उन्हें धीरे-धीरे शिथिल कर दिया था।

इसके विपरीत, वीरेंद्र यादव पचहत्तर वर्ष की आयु के बाद भी जिस तरह सोशल मीडिया, पत्र-पत्रिकाओं और हिंदी आलोचना में सक्रिय थे, उसे देखते हुए यह सहज ही लगता है कि उनका समय अभी पूरा नहीं हुआ था। उनका सर्वश्रेष्ठ लेखन अभी आना शेष था। खासकर ऐसे दौर में, जब वर्णाश्रमी व्यवस्था और हिंदू फासीवाद का अंधकार लगातार भारत की बहुलतावादी, लोकतांत्रिक और समावेशी संस्कृति को निगलता जा रहा है, ऐसे समय में वीरेंद्र

यादव जैसे आलोचक का न होना एक गहरी बौद्धिक क्षति है।

वीरेंद्र यादव हिंदी समाज की उन विरल शख्सियतों में थे, जिन्होंने इन प्रवृत्तियों का लगातार और निर्भीक प्रतिकार किया। वे प्रगतिशील परंपरा के भीतर रहकर भी उसकी जड़ताओं, सीमाओं और अंतर्विरोधों को प्रश्नांकित करते रहे। उन्होंने वाम-प्रगतिशील विचारधारा को केवल वर्गीय फ्रेम में सीमित न रखकर उसे जातिवाद, नस्लवाद, पितृसत्ता, औपनिवेशिक विरोध और फासीवाद-विरोधी संघर्ष की बहुस्तरीय जमीन प्रदान की।

उनका लेखन बहुआयामी है और उसके कई पक्षों का सम्यक मूल्यांकन अभी शेष है। उनका सबसे महत्वपूर्ण अवदान हिंदी उपन्यास आलोचना के क्षेत्र में माना जाता है। उनकी चर्चित पुस्तक 'उपन्यास और वर्चस्व की सत्ता' ने हिंदी आलोचना में एक तरह से वैचारिक हलचल पैदा की। इसी पुस्तक के प्रकाशन के बाद वे अचानक हिंदी आलोचना के केंद्र में आ गए।

इस पुस्तक में उन्होंने हिंदी उपन्यासों की स्थापित पाठ-परंपरा का ऐसा पुनर्पाठ प्रस्तुत किया, जो अपने आप में ऐतिहासिक महत्व रखता है। यह पहली बार था जब हिंदी उपन्यासों के विश्लेषण में जाति और नस्ल के प्रश्न इतनी केंद्रीयता के साथ उभरकर सामने आये। 'गोदान' (प्रेमचंद), 'झूठा सच' (यशपाल), 'मैला आंचल' (फणीश्वरनाथ रेणु), 'राग दरबारी' (श्रीलाल शुक्ल) और 'आधा गांव' (राही मासूम रजा) जैसे बहुचर्चित उपन्यासों का जो पाठ वीरेंद्र यादव ने प्रस्तुत किया, वैसा पाठ उनसे पहले किसी आलोचक ने नहीं किया था।

इन उपन्यासों को उन्होंने जिस इतिहासबोध और समाजबोध के साथ अलगाया, उसमें वर्चस्व, सत्ता, जातीय

संरचना और सांप्रदायिक अंतर्विरोधों की स्पष्ट पहचान दिखाई देती है। इस क्रम में उन्होंने 'बड़े' माने जाने वाले आलोचकों की सीमाओं की ओर भी बिना किसी संकोच के संकेत किया। चाहे वह रामविलास शर्मा हों, या नामवर सिंह, विश्वनाथ त्रिपाठी हों, या पुरुषोत्तम अग्रवाल, इन सभी दिग्गजों से उनकी टकराहट जगजाहिर है।

इसी तरह देश-विभाजन पर केंद्रित हिंदी-उर्दू उपन्यासों का जो आलोचनात्मक पाठ उन्होंने तैयार किया, वह भी अभूतपूर्व था। विभाजन के उस सर्वथा अदीठ पक्ष - जहां जाति, मजहब और सत्ता के अंतर्संबंध काम कर रहे थे - को उन्होंने आलोचना के केंद्र में ला खड़ा किया। बदीउज्जमा के उपन्यास 'छाको की वापसी' पर उनका पाठ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह भी वीरेंद्र यादव ही थे, जिन्होंने पहली बार हिंदू और मुस्लिम लेखकों के विभाजन संबंधी लेखन में निहित केंद्रीय वैचारिक अंतरों को रेखांकित किया और मुस्लिम लेखकों की 'पाक-अवधारणा' से जुड़े प्रश्नों को आलोचनात्मक निगाह से देखा।

बड़ी रचनाओं को दरकिनार करने की प्रवृत्ति हो या आस्वादपरक, एकांगी लेखन को 'प्रगतिशील' आलोचना द्वारा तिल का ताड़ बनाने की रणनीतियां, इन सब को वीरेंद्र यादव ने लगातार बेनकाब किया। विनोद कुमार शुक्ल और निर्मल वर्मा जैसे लेखकों के लेखन को जिस तरह प्रगतिशील आलोचना ने महिमामंडित किया, उसके भीतर छिपी एकांगिता और हिंदुत्व-व्यामोह को वीरेंद्र यादव ने ठोस तर्कों के साथ उद्घाटित किया।

इसी तरह केदारनाथ अग्रवाल के लगभग गुमनाम उपन्यास 'पतिया' की आज के अस्मितावादी विमर्शों के आलोक में की गई उनकी व्याख्या उनकी आलोचनात्मक गहराई और वैचारिक विस्तार का प्रमाण है। लोकप्रचलित और उपेक्षित - दोनों तरह के उपन्यासों पर उनकी पैनी दृष्टि रहती थी। जब प्रगतिशील आलोचना ने दूधनाथ सिंह के उपन्यास 'आखिरी कलाम' को लगभग भुला दिया, तब वीरेंद्र यादव ने उसे अपने समय का एक महत्वपूर्ण और जोखिमपूर्ण लेखन घोषित किया।

वीरेंद्र यादव का लेखन विपुल और बहुआयामी था। वे प्रगतिशील आंदोलन की उपज थे, लेकिन बहुजन लोकेशन से आने के कारण उन्होंने जातीय और वर्गीय गैर-बराबरी को जिस व्यापकता और जटिलता में चिह्नित किया, वैसा किसी सवर्ण आलोचक ने नहीं किया। अपने बाद के लेखन में उन्होंने फासीवाद और जातिवाद को जिस स्पष्टता और आक्रामकता से निशाने पर लिया, उसका उदाहरण उनका लेख 'जनतंत्र, जातितंत्र और हिंदी मानस' है।

उन्होंने 1857 की लड़ाई के भीतर मौजूद जाति, मजहब और सामंती अवशेषों के दोमुंहेपन को भी प्रश्नांकित किया। हिंदी क्षेत्र के लेखन और राजनीतिक चिंतन में व्याप्त सांप्रदायिकता तथा जातिगत संरचनाओं को उन्होंने बहुस्तरीय ढंग से परखा। भारतेंदु हरिश्चंद्र और मैथिलीशरण गुप्त के लेखन में व्याप्त यथास्थिति और अंतर्विरोध से लेकर समाजवादी नेताओं - नरेंद्र देव, नेहरू - और यहां तक कि रवींद्रनाथ टैगोर के शांति निकेतन में व्याप्त जातिभेद तक, इन सभी संदर्भों को वे आलोचना के दायरे में ले आए।

उनके लेखन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित सामयिक टिप्पणियों के रूप में भी सामने आया। इनमें देश-विदेश के उन लेखकों की चिंताएं प्रमुख रहीं, जो सांप्रदायिक फासीवाद, नस्लवाद, जातिवाद और पितृसत्ता से संघर्षरत रहे हैं। सलमान रुश्दी, तसलीमा नसरीन, पेरूमल मुरुगन, गौरी लंकेश, अरुंधति राय, नरेंद्र दाभोलकर और सौवेंद्र शेखर हांसदा जैसे लेखकों ने अपने समय में वर्णाश्रमी-फासीवादी प्रवृत्तियों के विरुद्ध लिखने की जो कीमत चुकाई, वीरेंद्र यादव ने उस लेखन की ताप से पाठकों की चेतना का आयतन व्यापक किया।

प्रेमचंद वीरेंद्र यादव के पसंदीदा लेखक थे। जब दलित लेखकों ने प्रेमचंद के लेखन को प्रश्नांकित किया तो उन्होने प्रेमचंद की ढाल बनकर वकालत की। प्रेमचंद उनकी कमजोरी थे, जिनकी एक भी आलोचना उन्हें बर्दाश्त नहीं थी। एक आलोचक के रूप में यह उनकी बड़ी सीमा थी, खासकर गांधी और आंबेडकरवाद के परिप्रेक्ष्य में प्रेमचंद का जिस यथास्थितिवादी गांधीवाद के पैरोकार थे, उनका कोई तर्कसंगत पक्ष उनके पास नहीं थे।

वीरेंद्र यादव की अभी तक 5 पुस्तकें प्रकाशित हैं। इनमें शामिल हैं- 'उपन्यास और वर्चस्व की सत्ता', 'उपन्यास और देस', 'प्रगतिशीलता के पक्ष में', 'विवाद नहीं हस्तक्षेप' और 'विमर्श और व्यक्तित्व'। 1990 के दशक में उन्होंने लखनऊ से 'प्रयोजन' पत्रिका का संपादन किया। हिंदी में बहुत कम ऐसे आलोचक हुए हैं जिनकी लिखी भूमिकाएं भी स्वतंत्र रूप से चर्चित हुई हों। 'मार्कण्डेय की संपूर्ण कहानियां' और यशपाल के 'विप्लव' पर लिखी उनकी भूमिकाएं इसी श्रेणी में आती हैं। उन्होंने जॉन हर्सी की चर्चित पुस्तक 'हिरोशिमा' का हिंदी अनुवाद भी किया।

हिंदी आलोचना में इतने बड़े अवदान के बाद भी एकाध अपवाद को छोड़कर उनके ऊपर आज तक कोई विशेषांक नहीं निकला। यह हिंदी लेखन में जारी द्विज भेदभाव का सबसे वीभत्स रूप है, जिसके शिकार बहुजन समाज से आने वाले लेखक खासतौर से होते रहे हैं। वीरेंद्र यादव के साथ भी यह उपेक्षा इरादतन बरती गई। हालांकि उन्हें देवीशंकर अवस्थी आलोचना सम्मान, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का साहित्यभूषण सम्मान, गुलाब राय सम्मान, शमशेर सम्मान और मुद्राराक्षस सम्मान से सम्मानित भी किया गया।

हिंदी आलोचना में उनका जाना केवल एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि परिवर्तनकामी आलोचना की एक सशक्त परंपरा का अवसान है।

प्रेम समाधि में योगेश्वर

–विद्याभूषण

योगेश्वर जी स्वामी विवेकानन्द को अक्सर दुहराते हैं। कहते हैं, नदी में नहाने के लिए जो आदमी डुबकी लगाता है, वह पानी से बाहर आने के बाद वही नहीं रह जाता। यानी वह दूसरा नया आदमी बन जाता है। ज्योतिष शास्त्र में भी उनकी अगाध आस्था है। इसलिए माना जा सकता है कि इन दिनों उनकी ग्रहदशा अनकूल नहीं चल रही। अनुज उमेश्वर के आने के बाद से उनकी बैचलर दिनचर्या में व्यवधान पड़ गया है। वे इधर उलझे-उलझे नजर आ रहे हैं। उमेश्वर ने गॉस्सनर कॉलेज में आईएस.सी. में एडमिशन ले लिया है। कहता है, वह अब यहीं पढ़ेगा और अग्रज के साथ रहेगा।

योगेश्वर जी की दिनचर्या अस्तव्यस्त रहती है। सुबह में लेट उठते हैं। बिछावन छोड़ते-छोड़ते साढ़े आठ बजा देते हैं। फिर कौआ नहान मार्का तमाम छोटे-बड़े कार्यक्रमों से उबरकर साढ़े नौ बजे के आसपास दफ्तर के लिए पैदल मार्च करते हैं। दोपहिया सवारी उन्हें रास नहीं आती। लिहाजा सुबह में उनसे मिलने कोई जाये तो कैसे जाये! उनका पूरा दिन दफ्तर में बिजी बीतता है। अब चाहे जैसे बीते। अपने सेक्शन में वे सिर्फ दो या तीन घंटे फाइलों में एकाग्रचित्त दिखते हैं। बाकी समय कैंटीन में या यूनियन ऑफिस में। गहन गपशपी विमर्श में, व्यस्त-अति व्यस्त। सिर्फ शाम उनकी अपनी होती है। फिर रविवार तो अपना साथी है ही।

दफ्तर से छूटने के बाद उन्हें किंचित तनावमुक्त देखा जा सकता है। लेकिन रफ्तार की तेजी यहाँ भी उनका साथ नहीं छोड़ती। सड़क हो या फुटपाथ, वे तेज रफ्तार में चलने वाले आदमी हैं। साफ शुद्ध उच्चारण में संस्कृतनिष्ठ शब्दावली में अपनी बात रखते हुए वे कहीं भी और कभी भी किसी विषय पर बोलना शुरू कर सकते हैं। और वह भी धाराप्रवाह शैली में। गांधी, नेहरू, कांग्रेस, समाजवाद, कम्युनिस्ट, राष्ट्रवाद और यूरोप-अमेरिका की आधुनिकता; ये उनके प्रिय टॉपिक हैं। इन मुद्दों पर धाराप्रवाह बोलते हुए उत्तेजना से भरे मुंह से थूक के छींटे अगल-बगल फेंकते हुए उनका अंदाज वाकई गजब ढाने वाला होता है। अपने जोशीले वक्तव्य के दौरान वे चैराहे पर चैराहे पार करते जायेंगे और थोक भाव से अपने अदृश्य शत्रुओं पर लानत-मलामत भेजते रहेंगे। इस घटाटोप वाद-विवाद में जो एक बार उनके साथ उलझ जाये, वह तूफान थमने से पहले भला कैसे पीछे हट सकता है!

फिर आखिरी तुर्रा यह कि वे अचानक हंसकर आपसे पूछ लेंगे-चाय पीयेंगे हुजूर! रास्ते में जो भी होटल उन्हें दिख जायेगा, वहाँ बड़े प्यार से आपका हाथ थाम कर अंदर ले चलेंगे। चाय पिलायेंगे। होटल में उस वक्त वे विवादों से विरक्त हो जाते हैं। इस दोस्ताना आवभगत के बाद उनकी अगली पेशकश आपके सामने आयेगी-आइये सर, एक बार ताम्बूलित हो लें। सामने वाला नागरिक सोचने लग सकता है, यह क्या माजरा है श्रीमान! विजय जानता है, योगेश्वर जी चाय के साथ-साथ पान के भी शौकीन हैं और अक्सर उसे परिनिष्ठित हिन्दी में तांबूल नाम से पुकारते हैं। सचमुच अनुपम व्यक्ति हैं योगेश्वर जी। अब इन्हीं के कारण विजय के लिए यह शहर रहने लायक बचा हुआ है।

एक रविवार को सुबह नौ बजे के आसपास वह योगेश्वर जी के घर पहुंचा। उनके अनुज उमेश्वर ने दरवाजा खोलते हुए बताया-'अभी कहां उठे हैं यार! संडे मना रहे हैं। आओ, देखो।' उनकी आवाज आयी-'बंधु विजय जी! यहीं आ जाइये श्रीमान।' वह उनके कमरे में गया। चारपाई पर तकिए के सहारे दीवार से टिक कर वे अधलेटे पड़े हुए थे।

उनको छेड़ने की गरज से विजय बोला-'अरे वाह भाई, साढ़े नौ बज गये। पूरा शहर जग चुका। लेकिन आप तो एकदम वाजिद अली शाह नजर आ रहे हैं।'

यागेश्वर बाबू हो-हो कर अट्टहास करने लगे। जब उनकी हंसी थमी तो कहने लगे-'बंधु, आज संडे है। सोचा था, कोई विद्वान पुरुष आये तो श्रीगणेश करेंगे। बैठिए, बैठिए, चाय पिलाता हूं।' और वे बिस्तरे पर अधलेटी मुद्रा में दहाड़ने लगे-'अरे उमेश्वर, दो कप चाय पिलाना रे, दो स्ट्रांग कप। एकदम कड़क।'

अबकी चौंकने की बारी थी विजय की-'ब्रश वश हो गया क्या बड़े भाई!'

इस बात पर योगेश्वर जी छप्परफाड़ ठहाके लगाने लगे-'अरे भाई, चाय पीने के लिए ब्रश करने की क्या जरूरत! ये बेड टी है। समझे? और शिकार करने से पहले कोई शेर मुंह-वुंह धोता है क्या?'

विजय ने हार मान ली-'मान गये बड़े भाई। पिलाइये, बेड टी ही पिलाइये।'

उमेश्वर कांच के दो गिलास लेकर कमरे में दाखिल हुआ। योगेश्वर जी फुर्ती से उठ बैठे, अपना गिलास विजय के गिलास से जाम की तरह टकराते हुए जोर से बुदबुदाये-'जय गुरुदेव।' दोनों चाय पीने लगे। उमेश्वर दो गिलास लेकर फिर कमरे में आया। इस बार उसके बायें हाथ में स्टील का गिलास था और दायें हाथ में कांच का गिलास। इस गिलास में दो इंच ऊंचाई भर चाय थी। उसने कांच के गिलास को स्टील के गिलास में उलट दिया और उन दोनों की बातचीत से निर्लिप्त रहकर शिप लेने लगा।

थोड़ी देर बाद जब वह लौट गया और चायपान का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ तो विजय

ने जिज्ञासा व्यक्त की-'बड़े भाई, ये बात समझ में नहीं आयी कि उमेश्वर ने थोड़ी सी चाय क्यों ली, और जल्दी गर्म हो जाने वाले स्टील के गिलास में उसे क्यों उलट दिया!'

योगेश्वर जी चाय पी कर तरोताजा लग रहे थे। उठ कर बैठ गये और बोले-'उसका राज मैं बताता हूं।' फिर धीमी आवाज में बोलने लगे-'अरे भाई, रोज यही होता है। मैं अपने गेस्ट के साथ चाय पीता हूं, एक गिलास चाय और उसमें दो चम्मच दूध। और वह जो चाय पीता है, उसमें एक गिलास दूध में दो चम्मच चाय होती है। वह स्टील के गिलास में दूध भर कर लाता है और कांच के गिलास की दो चम्मच चाय को दूध भरे गिलास में मिला देता है।'

अब दो सम्मिलित ठहाके उस कमरे में गूंज रहे थे। उस दिन योगेश्वर बाबू ने सत्संग के पहले सत्र की घोषणा इस वाक्य के साथ की-'विजय जी, यह मिलावट का युग है। उसका फार्मूला है, मिलाइये कुछ, दिखाइये कुछ। समझे, कि नहीं समझे!'

'समझ गये बड़े भाई, पूरा समझ गये।'

उन्होंने आगे जोड़ा- 'यह रुझान सर्वव्यापक है श्रीमान! आप उसे कदम-कदम पर देख सकते हैं। हर तरफ। मिठास परोसने की चीज बन गयी है, खिलाने की नहीं। सुरुचि भी अब प्रदर्शन की चीज है। सच्चा होने से ज्यादा जरूरी है, विश्वसनीय होना। चंद अपवादों को छोड़ कर घर-बाहर तमाम लोग अपने मानक बदल रहे हैं।'

अगले इतवार की शाम इत्तेफाक से योगेश्वर जी उसके घर के रास्ते में मिल गये। वे विजय के पास ही आ रहे थे। नमस्कार लेने-देने के बाद वे उसका हाथ पकड़ कर सामने की पान की दूकान की ओर लपके-'आइये श्रीमान, पहले ताम्बूलित हो लेते हैं।'

विजय ने पूछ लिया-'और चाय पान?'

वे बोले-'उसके लिए तो फिर वहीं चलेंगे, स्टेशन के पास। राहुल राय की चाय का जवाब नहीं। क्यों, आज नहीं चलना है वहां?'

उसने कहा-'ठीक है बड़े भाई! छुट्टी का दिन है! जैसी आपकी मर्जी!'

पान खा कर पीला जर्दा फांकते हुए दोनों स्टेशन की ओर बढ़े। आज बातचीत कम हो रही थी। मौन का भाव प्रबल था। विजय को अचरज हुआ कि इतनी देर तक वे चुप कैसे रह गये! एक बार भी कांग्रेस सरकार पर नहीं बरसे। आधुनिकता और फैशन को भारतीय जीवन में विजातीय तत्व नहीं बताया। उनके परम श्रद्धा केन्द्र में प्रतिष्ठित पांडिचेरी आश्रम और माता जी की प्रेरणादायी याद भी उन्हें नहीं आ रही है। बहुत दिनों के बाद आज महर्षि अरविन्द, उनके दिव्य आश्रम की शान्ति, 'सावित्री' शीर्षक अंग्रेजी में सुलिखित महाकाव्य का औदात्य और अदिति शीर्षक वाली ध्यान-योग की पुस्तिका भी अभी उनके घ्यान से उतर गयी लगती है! वे तो अपने शहर के अरविद आश्रम की दुर्दशा पर हमेशा दुखी रहते हैं और उसके सचिव की समझ पर तरस खाना कभी नहीं भूलते। 'एस्ट्रोलॉजी' पत्रिका तो उनके झोले में हमेशा सुलभ रहती है। उसके फलित ज्योतिष के निष्कर्ष की चर्चा-परिचर्चा भी उनको अत्यन्त प्रिय है। आज इन शाश्वत चिन्ताओं से वे विमुख लग रहे हैं। इनमें से किसी की याद उनको नहीं आ रही।

आज उनकी बातचीत में घरेलू टोन और पारिवारिक प्रसंग ही क्यों हावी है! विजय अंदाज नहीं लगा पा रहा कि उनकी यह बदली हुई मनोदशा क्या बता रही है! चाहे वे किसी वजह से दुखी हैं, सुस्त हैं या किसी चिन्ता से घिरे हैं। उनको अपनी मां या बहनों की चिन्ता करते हुए उसने कभी नहीं देखा। बहनोइयों के बारे में वे सदा तटस्थ बने रहते हैं। छोटा भाई थोड़ा खुराफाती है, तो भी उसके बारे में ज्यादा नहीं सोचते। अभी तक वे कुंवारे हैं तो घर-गृहस्थी की कोई फिक्र उनको हो भी नहीं सकती! फिर क्या वजह हो सकती है इस मौन मुद्रा की? कोई न कोई बात तो है जरूर!

वह बात खुली, मगर जरा देर से। वे दोनों हमेशा की तरह तेज रफ्तार पदयात्रा करते हुए स्टेशन आ गये। राहुल राय की चाय दूकान में कोने वाला टेबुल उन्हें खाली मिल गया। आज बातचीत के दौरान योगेश्वर जी का लहजा नरम है। हरदम पंचम पर रहने वाला उनका कंठ स्वर अभी शान्त व धीर गंभीर बना हुआ है। चाय की पहली शिप ले कर भी उनकी चुप्पी नहीं टूटी। टेबुल पर केहुनी टिका कर हथेलियों पर टिका उनका चेहरा अभी जाने किस शून्य में विचर रहा है! उनसे पूछताछ करना उचित नहीं लगा। वे मित्रवत हो चुके हैं, मगर भइया के मित्र होने के नाते वह उनका कमोबेश लिहाज भी करता है।

देर तक इन्तजार नहीं करना पड़ा। उनकी चाय ठंढी हो चुकी थी। दूसरा कप मंगा कर दोनों फिर चाय सुड़कने लगे। अचानक चाय की एक लंबी घूंट उन्होंने ली और मुस्कुराये। उनका स्वर पूरी तरह शान्त और सहज है-'एक पर्सनल प्रॉब्लम है श्रीमान! सोचा था, अजय आयेगा तो उससे डिस्कस किया जायेगा। लेकिन उम्मीद तो नहीं है कि वह तुरत यहां आयेगा। उसके बाद आपसे ज्यादा मेरा नजदीकी कोई दूसरा आदमी है नहीं। लगता है, अब आपको ही कष्ट देना पड़ेगा।'

खुद को संयमित करते हुए विजय कहने लगा-'बड़े भाई, आप बेझिझक कोई भी बात मुझसे कर सकते हैं। हम पूरे ध्यान से सुनेंगे और जो जरूरी और सही लगेगा, वह आपको बता देंगे। लेकिन आप पहेली मत बुझाइये। साफ-साफ बतलाइये कि मामला क्या है!'

उनके सामने टेबुल पर चाय का तीसरा कप पड़ा है। उन्होंने बची हुई चाय एक घूंट में खाली कर ली और उठते हुए बोले-'चलिए। यहां से उठिये। पहले ताम्बूलित हो लेते हैं। फिर तो रात अपनी है। आपको घर तक पहुंचाने का जिम्मा मेरा।'

पान खा कर मनचाही सुर्ती फांक कर

वे आगे बढ़े। विजय को पता है कि उनका अगला पड़ाव कहां होगा! उनके लिए एकान्त का मतलब है प्लेटफार्म का कोई सन्नाटा कोना और वहाँ खाली पड़ी कोई बेंच। सचमुच अपनी मनपसंद जगह खोज कर वे जम गये। जमे तो डेढ़घंटे तक जमे रहे। अनुमान मिलता-जुलता निकला। बड़े भाई का चक्कर अपने अफसर की बेटी के साथ चल रहा है। वे उस लड़की को ऑनर्स की परीक्षा के लिए तैयारी करा रहे हैं। रूप और धन दोनों से सम्पन्न वह लड़की अपने मास्टर जी की फटेहाल जिन्दगी पर तरस खाने लगी है। मास्टर जी उसे अर्धांगिनी बनाना चाहते हैं। उस कन्या को यह भूमिका जंच नहीं रही। घमंडी मां और तुनुकमिजाज बाप की वह लड़की अभी खुद को उतनी बड़ी नहीं मानती कि जिन्दगी के ऐसे बड़े फैसले अपनी मर्जी से कर ले। बहुत दिनों तक उसकी ना-नुकुर चलती रही। पांच भाई-बहनों में सबसे बड़ी वह कन्या अपने अमीर अफसर पिता के मातहत काम करने वाले किरानी से ब्याह करने के लिए तैयार नहीं हो रही। घर-बाहर के लोग क्या कहेंगे! मम्मी-पापा राजी नहीं हुए, तब क्या होगा! तब तो सबसे नाता तोड़ कर अकेले आगे बढ़ना पड़ेगा। आगे कैसे क्या होगा! कोई भी बात उसकी समझ में नहीं आ रही थी।

उस रोज योगेश्वर जी ने बताया कि वे अपनी पार्टनर को राजी करने में कामयाब हो गये हैं। अब असल समस्या यह है कि ब्याह की बात आगे बढ़े तो कैसे! भनक पड़ते ही उस घर में उनका प्रवेश वर्जित हो जायेगा। साहब बेटी का कॉलेज जाना रोक सकते हैं। फिर उनको बीच का ऐसा कोई पुल नहीं दिखता जो दोनों किनारों पर ट्रैफिक जारी रख सके। यह विमर्श और देर तक चलता, मगर उसकी नजर प्लैटफार्म पर लगी रेल घड़ी पर चली गयी। रात के पूरे ग्यारह बजने वाले थे। विजय की मां घर में परेशान हो रही होगी। इतनी देर तो कभी नहीं करता वह! उसने योगेश्वर जी के कंधे पर हाथ रखा-'अब चलना चाहिए बड़े भाई! कल फिर मिलते हैं। कोई न कोई उपाय निकल ही आयेगा। और एक दिन में सारी बातें पूरी नहीं हो सकती हैं। है न!'

योगेश्वर बाबू उसकी कठिनाई समझ रहे थे-'ठीक है बंधु। अब यहां से चलना चाहिए। कल शाम हमलोग फिर मिलते हैं। मिल रहे हैं न?'

उसने तुरत कहा-'हां, हां, श्योर। कल मिल रहे हैं, और जरूर मिल रहे हैं।'

सम्पर्क : सरला बिरला यूनिवर्सिटी कैंपस, महिलौंग, टाटीसिलवे, रांची 835103 (झारखंड) फोन- 99551-61422

किताब का विमोचन

किताब 'मजाज़ हूं सरफ़रोश हूं मैं' का विमोचन बांदा में आयोजित 'जनवादी लेखक संघ' के राष्ट्रीय सम्मेलन में हुआ। बांदा। 'जनवादी लेखक संघ' के ग्यारहवें राष्ट्रीय सम्मेलन का आगाज़ 19 सितम्बर को बांदा में हुआ। 'बोल कि सच ज़िन्दा है अब तक' विषय पर आयोजित पहले सत्र का उद्घाटन वैज्ञानिक और शायर गौहर रज़ा ने किया, तो वहीं सेशन की विशिष्ट अतिथि सोशल और पॉलिटिकल एक्टिविस्ट सुभाषिनी अली थीं। उद्घाटन सत्र के बाद दूसरे सेशन का विषय 'अघोषित आपातकाल के हमले और प्रतिरोध' था। इस सेशन में चर्चित कवि शुभा, नितिशा खलको, संपत सरल, सोशल एक्टिविस्ट और लेखक भंवर मेघवंशी ने भागीदारी की। सत्र का संचालन युवा आलोचक संजीव कुमार ने किया। जबकि अध्यक्ष मंडल में वरिष्ठ आलोचक चंचल चौहान, रेखा अवस्थी, प्रसिद्ध कवि इब्बार रब्बी, लेखक-स्तंभकार और आलोचक रामप्रकाश त्रिपाठी, उर्दू ज़बान के बड़े नक़्क़ाद अली इमाम खान शामिल थे।

तीन दिवसीय इस सम्मेलन में 20 सितम्बर को सांगठनिक सत्र में दीगर किताबों के साथ लेखक-पत्रकार ज़ाहिद खान और मुख़्तार ख़ान द्वारा अनूदित एवं सम्पादित किताब 'मजाज़ हूं मैं सरफ़रोश हूं मैं' (गार्गी प्रकाशन, नई दिल्ली) का भी विमोचन हुआ। विमोचन इब्बार रब्बी, मनमोहन, चंचल चौहान, रेखा अवस्थी, डॉ. मृणाल, कामरेड सुबोध मोरे, नलिन रंजन सिंह, रामप्रकाश त्रिपाठी, अली इमाम खान, बजरंग बिहारी तिवारी ने किया। विमोचन के वक़्त किताब के अनुवादक और सम्पादक मुख़्तार खान भी मौजूद थे। गौरतलब है कि मजाज़ तरक्की-पसंद तहरीक से जुड़े हर-दिल-अज़ीज़ शायर थे। किताब में जहाँ मजाज़ की दिल-आवेज़ शख़्सियत और उनके अदबी, समाजी, सफ़ाक़ती और सियासी कारनामों पर मजाज़ के क़रीबियों और अज़ीज़ों हमीदा सालिम, जां निसार अख़्तर, अली सरदार जाफ़री, सज्जाद ज़हीर, फ़िराक़ गोरखपुरी, जोश मलीहाबादी, फैज़ अहमद फैज़, इस्मत चुगताई, आल-ए-अहमद सुरूर और फ़िक्र तौंसवी के आलेख हैं, तो वहीं इसमें उनका चुनिंदा कलाम भी शामिल हैं।

–ज़ाहिद ख़ान

बेटियों के प्रति मान-सम्मान की भावना होनी चाहिए !

वर्षों पुराना प्रसंग है। मैं अपने मारवाड़ी मित्र पारसमल जी की विवाहित सुपुत्री मीता से मिलने उनके घर कराड़ (महाराष्ट्र) पहुंचा। मुझे देखते ही मीता बेटी ने मुस्कुराते प्रणाम किया। चरण स्पर्श करने के लिए जैसे ही झुकने वाली थी कि मैंने उसे विनम्रतापूर्वक मना किया और कहा, ' हमारे समाज में बेटियां और बहनें पांव नहीं छूती हैं। ' आश्चर्यचकित होकर उसने मुझसे कहा, ' मैं तो आपके समाज की नहीं हूँ। फिर मुझे पांव पड़ने से क्यों रोक रहे हैं ? ' मैंने उसकी जिज्ञासा शांत करते हुए कहा, ' हम दूसरों की बेटी, बहन को भी अपनी समझते हैं, इसलिए। ' मीता बेटी ने श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़े । यहां मैं अवगत करना चाहता हूं कि सिंधियों में बेटी, बहन कुंवारी हो या विवाहित, मायके वालों के चरण स्पर्श नहीं करती हैं। इसके बदले एक हाथ आगे बढ़ाकर गले मिलती हैं। कुछ लोगों को पांव न पड़ने की ये प्रथा अजीब, अटपटी लगती है। कईयों को साश्चर्यजनक भी लगता है। एक और सुंदर, सराहनीय प्रथा है। कोई भी अपनी बहन, बेटी या माँ से पीने के लिए पानी नहीं मांगता है । भाभी आयु में बड़ी हों तो उनसे भी नहीं। पत्नी, बहू या छोटी भाभी से मांगते हैं। मजबूरी में ख़ुद गिलास में भरकर पानी पीने में उन्हें कोई हिचकिचाहट, शर्म महसूस नहीं होती है। समयानुसार कहीं कहीं इस प्रथा में बदलाव भी देखने को मिलता है।

मैं यहां स्पष स्पष्ट रूप से कहना चाहता हूं कि मेरा उद्देश्य सिंधी समुदाय की स्तुति करना नहीं। ऐसा और समाजों में भी होता होगा। जूरी (झारखंड) का उदाहरण अनुकरणीय है। वहां की गलियों के नाम, गांव की पढ़ी-लिखी लड़कियों के नाम पर होते हैं जोकि प्रशंसनीय पहल है। वहां लड़कियों को पढ़ने-लिखने के लिए सदैव प्रोत्साहित किया जाता है। देखा गया है कि शिक्षा के अभाव में अधिकतर समाजों में पुरानी दकियानूसी परंपराओं को ओढ़ना-बिछौना जरूरी समझते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि लकीर का फ़कीर कहलाना पसंद करते हैं। बेटियों के मामले में शुरू से ही सभी सिंधुजनों की सोच समान और सकारात्मक रहती थी। इसके पीछे यही सीख, संस्कार दिए जाते थे कि बेटियां ' पराया धन ' होती हैं। मां-बाप के साथ कुछ वर्ष बिताएंगी और विवाह करके ससुराल चली जाएंगी। इसलिए उनकी इच्छाओं, आकाक्षाओं का आदर करना चाहिए। उनका दिल नहीं दुखाना चाहिए। ऐसे कड़े बोल नहीं बोलने चाहिए, जिससे वे आहत, अपमानित महसूस करें। इसीलिए, सिंधी समाज में कन्या भ्रुण जैसी घृणास्पद घटनाएँ न के बराबर होती हैं।

सिन्धजनों में रिश्ता जोड़ने से पहले लड़की वाले लड़के और उसके परिवार की ठोक-बजाकर जांच- पड़ताल करते हैं। संतुष्ट होने पर पहले लड़की का फ़ोटो दिखाते हैं। फ़ोटो देखकर पसंद आने पर ही लड़की देखने बुलाते हैं। लड़के वालों को अपने घर पर बुलाने की बजाय किसी मंदिर या पार्क में बुलाते हैं। मंदिर या बाग ऐसा चुनते हैं जहां भीड़-भाड़ बिलकुल न हो। इसके पीछे तर्क यह है कि अगर लड़की को नापसंद किया गया तो किसी को उसकी भनक तक नहीं लगे । अगर घर पर बुलाएंगे तो सभी गलीवालों को पता चलेगा। उलट-सुलट चर्चाएँ चलेंगी। कानाफूसियाँ शुरू होंगी। लड़के वालों को अगर लड़की पसंद हो तो तुरंत या बाद में बताते हैं। नापसंद हो तो विचार करके बताने को कहते हैं। सिंधी समाज में दहेज प्रथा तो है, लेकिन अनिवार्यता, बाध्यता नहीं। जो कुछ लड़की वालों ने दिया, लड़के वाले हंसी-ख़ुशी स्वीकार करते हैं। आजकल ऐसे हालात हैं कि अमीर परिवार भी बिना दहेज के गरीब घर की लड़की को बिना दहेज के अपनाते हैं। ये बदलाव बेहतर है। लड़की वाले बारात लेकर आते हैं। विवाह का सारा ख़र्च लड़के वालों को वहन करना पड़ता है। आजकल महानगर में रहने वाले विवाह के खाने-पीने और हॉल का किराया आपस में आधा-आधा बांटते हैं। लड़की वालों की मेहमानों की भांति आव-भगत की जाती है। ऐसा मनोहारी दृश्य देखकर कुछ लोग चौंकते हैं। इस प्यारी प्रथा पर प्रशंसा के पुल बांधते हैं। दहेज पहले से कुछ भी तय नहीं होता है। हाँ, ईशारों में अपनी आर्थिक स्थिति से जरूर अवगत कराया जाता है। इससे लड़के वालों को अंदाज़ा लग जाता है। इसी कारण सिन्धुजनों में दहेज उत्पीड़न , हत्याओं जैसी वारदातें ना के बराबर होती हैं। ऐसी घटनाओं के पीछे महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बहू के साथ मनमुटाव होने पर भी दहेज के मामले में उनके साथ बुरा सलूक न ख़ुद करती हैं, न परिवार वालों को करने देती हैं।

कई लोगों का मत होता है कि शिक्षा के अभाव में लोग दूसरों की बेटियों, बहनों के साथ बुरा व्यवहार करते हैं। जोकि तर्कसंगत-न्यायसंगत नहीं। लड़कियों, महिलाओं के साथ होने वाले व्यवहार को देखकर अंदाज़ा लगाता जा सकता है कि ये समाज कितना सभ्य है। अगर बचपन से ही बच्चों में संस्कार के बीज बो दिए जाएं कि तुम्हारी बहन की तरह ही दूसरी लड़कियाँ भी बहन के समान हैं। किसी को भी दूसरों की बेटियों , बहनों के साथ बुरा बर्ताव करने का कोई अधिकार नहीं। वे तुम्हारा ख़रीदा हुआ ख़िलौना नहीं, जिस पर तुम अपना अधिकार जता रहे हो। मेरा मानना है कि स्कूल में या घर पर बेटियों को ' गुड टच ' और ' बैड टच ' के बारे में भी बताना, समझाना बहुत जरूरी है। लड़कियों, महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा, अत्याचार जैसी वारदातें शर्मनाक-दुखदायक हैं। इसे रोकने के लिए लोगों को जागरूक करना जरूरी है। तभी इस पर लगाम लग सकती है।

- अशोक वाधवाणी गांधी नगर, कोल्हापुर, महाराष्ट्र, संपर्क- 9421216288

‘बिना कुछ छोड़े कैसे बचेगा हसदेव!’

वेद प्रकाश सिंह

बिलासपुरमें लोक सेवा आयोग की परीक्षा की तैयारी के समय के एक पुराने मित्र से बड़े दिनों बाद मुलाकात हुई।कुछ वर्ष पूर्व ही वह अधिकारी बना है।

बिलासपुर में तैयारी के दौर से अब तक जब-जब हमारी मुलाकात होती है, तब-तब सामाजिक विषयों पर लंबी चर्चा हो जाती है।इस बार भी चर्चा आरंभ हुई।

उसने कहा,

‘कोरबा-हसदेव का जंगल लगभग खत्म हो गया है। तमनार, रायगढ़ की ओर भी जंगल कटाई का काम चालू हो गया है। अब अरावली पर्वत की बारी है। पूरे जल, जंगल, जमीन को खत्म करने की कवायद चल रही है।’

मैंने चर्चा शुरू होते ही बात काट दी,

‘अरे, ये सब छोड़ो। यह तो चलता रहता है। यह बताओ, घर में सब कैसे हैं? भाभी जी कैसी हैं? सब बढ़िया है न?’

वह मुस्कराया।

‘हाँ भाई, सब बढ़िया चल रहा है।’

फिर कुछ रुककर उसने कहा,

‘रायपुर में एक नया घर बनवाना है। शहर में पापा की एक पुश्तैनी जमीन है।’

मैंने पूछा,‘कितनी दूर है?’

‘पास में ही है, चलो देख आते हैं।’ उसने कहा।

वह कार की ओर जैसे ही बढ़ा।

मैंने कहा,

‘पास में ही है तो कार से क्यों? पैदल ही चलते हैं न!’

‘अरे नहीं भाई, सुबह ही जिम से आया हूँ। आज मेहनत ज्यादा हो गई है।’

फिर उसने अपनी एसयूवी निकाली।हम दो लोग छह-सीटर कार में चलने लगे।मैंने कहा,

‘कार तो बढ़िया है, ईवी क्यों नहीं लिया?’

वह बोला,

‘ईवी का कोई भरोसा नहीं है। और अपन सरकारी अफसर हैं, डीजल फ्री मिलता है।’

हम आगे बढ़े तो रास्ते में मैंने सहज भाव से पूछा,

‘तुम्हारा प्लॉट कितना बड़ा है?’

‘लगभग 700 स्क्वेयर फीट।’

हम प्लॉट तक पहुँचे।अच्छे लोकेशन में प्लॉट था। उसमें एक नीम और दो पीपल के बड़े पेड़ लगे थे।मैंने कहा,

‘लोकेशन अच्छी है। पेड़-पौधे भी हैं। घर के साथ हरियाली भी रहेगी।’

वह हँस पड़ा।

‘अरे नहीं भाई! प्लॉट छोटा है। घर बनाना है तो पेड़ कटवाने पड़ेंगे।’

उसकी आवाज़ में कहीं भी अपराधबोध नहीं झलक रहा था।मैंने पूछा,

‘घर की डिज़ाइन कैसी सोच रहे हो?’

उसने उत्साह से बताया,

‘बस टू-बीएचके और कार की पार्किंग हो जाए। डुप्लेक्स टाइप। बाद में ऊपर किराए के लिए दो कमरे निकाल दूँगा।’

मैंने धीरे से पूछा,

‘मतलब अच्छा-खासा सरिया और सीमेंट लगेगा। लेकिन लोहा, गिट्टी, रेत कहाँ से आएगा?’

वह बोला,

‘दुकान से आएगा।’

मैंने कहा,

‘नहीं। माइनिंग से आएगा। और माइनिंग से जमीन भी जाती है, पेड़ भी।’

वह कुछ क्षण चुप रहा।फिर बोला,

‘भाई, सिस्टम ऐसा ही है। कोई उपाय नहीं है।’

‘और दरवाजे-खिड़कियाँ?’ मैंने आगे पूछा।

‘सागौन के लगवाने हैं। घर एक बार बनता है, तो चीजें टिकाऊ होनी चाहिए।’

मैंने मुस्कराकर कहा,

‘सागौन भी जंगल से ही आता है।’

वह बोला,

‘हाँ, पर अच्छा घर ऐसे ही बनता है।’

मैंने आखरिी सवाल किया,

‘घर बन जाएगा तब बिजली के लिए, आजकल जो सोलर सिस्टम चल रहा है, वह लगवाओगे?’

वह हँसते हुए बोला,

‘अरे! एसी-कूलर सब लगेंगे। अधिकारी का घर है। सोलर सिस्टम लोड ले पाएगा या नहीं, क्या पता?’

फिर जोड़ते हुए बोला,

‘छत भी छोटी होगी। तुम्हारी भाभी को किचन गार्डन बनवाना है। सोलर पैनल के लिए जगह नहीं बचेगी।एक-डेढ़ लाख का खर्च अलग है। हमारा छोटा परिवार है,बिजली बिल आधा हो जाता है। अपने लिए णएँ का मीटर ही ठीक है।’

तो मैंने कहा,

‘उस बिजली के लिए कोयला लगेगा। कोयले के लिए जंगल कटेंगे। शायद वही हसदेवष्ठ’

वह चुप हो गया।उसके चेहरे पर एक अजीब-सी शांति छा गई।फिर बोला,

‘भाई! तुझे वकील बनना चाहिए, कहीं की बात कहीं जोड़ देता है।’

--

जल, जंगल, जमीन से शुरू हुई इस पूरी बातचीत से मुझे यह समझ आया कि हम जंगल बचाने की बात तब तक ही करते हैं, जब तक वह हमारे घर, खेत और सुख-सुविधाओं के रास्ते में न आए।

आज हमने अपनी जरूरतें इतनी बढ़ा ली

हैं कि पीछे एक सामान्य जीवन शैली में लौटना कठिन होता जा रहा है। हम अपनी जीवनशैली से एक भी सुविधा कम नहीं करना चाहते।गर्मी में एसी के बिना बातचीत तक नहीं हो पाती। पंखा तो छोड़िए, कूलर से भी अब संतोष नहीं मिलता।

और फिर, एसी- फ्रिज छोड़ने की ही बात भला कौन करें?सोशल मीडिया पर #save_hasdeo चलाने वाले, दिन में दो-दो बार मोबाइल चार्ज करने वाले युवाओं तक की बिजली भी हसदेव जैसे जंगलों को काटकर ही पहुँच रही है।पर हमें क्या? हमारी सुविधाओं की कीमत पर प्रकृति को हो रहा नुकसान हमारे लिए महत्वहीन हो चुका है।जैसे ही हम 'आवश्यकता' और 'सुविधा' के बीच खड़े होते हैं,हम एक ही वाक्य बोल देते हैं,

'ऐसा ही चलता है, कोई उपाय नहीं है।'और यही कहकर हम अपना पल्ला झाड़ लेते हैं।सच बात तो यह है कि उपाय हमेशा होते हैं।बस उन्हें अपनाने के लिए हमें अपनी आदतें बदलनी पड़ती हैं।और वही बदलाव हमें सबसे कठिन लगता है।जल, जंगल और जमीन बचाने की बात सब करते हैं,लेकिन अपनी सुविधाओं को कम करने की बात कोई नहीं करता।

रिसर्च स्कॉलर, कलिंगा विश्वविद्यालय,

वीना सिंह की दो लघुकथाएं

1- रोजमर्रा

गाँव की सुबह किसी अलार्म से नहीं, चिड़ियों की चहचहाहट और आँगन में झाड़ू फेरती घर की औरतों से शुरू होती है।

वीना सिंह

रामदुलारी अम्मा हर दिन की तरह तुलसी पर जल चढ़ाकर चौखट धो देती हैं। उनका कहना है, 'घर साफ रहै, त मन आपे-आप चमक उठै।'

उधर हरिया, जो पटरी पर सब्जी बेचता है, साइकिल के कैरियर में टोकरा जमाकर निकल पड़ता है। रास्ते में मिलने वाले हर आदमी को वह एक ही बात कहता है- 'आज बिल्कुल ताजा भिंडी, टिंडा, लौकी है, भईया, जरा देख लेइयो।' लोग हँसते हुए उससे दो बातें कर लेटे हैं और उसकी साइकिल को रास्ता दे देते हैं।

झुंड बनाकर खिलखिलाती स्कूल जाती छोटी बिटियाँ रास्ते भर नई नई शरारते करती रहती है। उसकी हँसी से लगता है मानो गाँव में खुशहाली फैल हो गई हो।

दोपहर में खेतों से लौटते मर्दों के हाथ खाली नहीं होते, कहीं ताजा सब्जी, कहीं बगीचे के ताजे अमरुद, और कहीं हरा-हरा साग। घरों की रसोई में दाल की खुशबू फैलने लगती है। मंदी की चिंता, बारिश की उम्मीद, और बच्चों की पढ़ाई, सब इसी बीच धीरे-धीरे सिर उठाते रहते हैं। लेकिन गाँव वाले मिलकर सभी समस्याओं पर विजय पाने में माहिर हैं।

शाम ढलते ही गाँव की पगडंडियाँ फिर जीवित हो जाती हैं। कहीं चौपाल पर बात, कहीं छतों पर निश्छल हँसी।

इन छोटे-छोटे कामों, आवाज़ों और सांसों से मिलकर ही चलता है गाँव का असली रोजमर्रा- सीधा, स्थिर और भरोसे से भरा।

2- बस एक दस्तखत़

'साहब, दादी ने अपनी जुबान से कहा था, ये खेत हमारी छोटी बहू को मिलेगा। कोई लिखत-पढ़त नहीं की, पर सबने सुना था,' रमेश ने फटी-पुरानी फ़ाइल आगे बढ़ाई।

'और किसी दस्तावेज़ पर उनके दस्तखत़ या अंगूठे का निशान?'

वकील ने बिना सिर उठाए पूछा।

'नहीं, कुछ नहीं। दादी ने कभी कोई कागज़ी काम नहीं किया। गाँव में उनकी जुबान ही वसीयत थी।'

वकील ने कागज़ एक ओर सरका दिया। 'लेकिन बेटा, अदालत सिर्फ़ दस्तावेज़ पहचानती है। भावना नहीं। खेत अब सब भाइयों में बाँटा जाएगा।'

रमेश का मुँह उतर गया, पिता के जाने के बाद माँ की मेहनत और तकलीफ आँखों के सामने घूम गई, माँ बरसों खेत में खटती रही थीं। दिन-रात मेड़ों पर काम किया था। भूखी प्यासी रह कर खेतों में अपना पसीना बहाया था।

उसने माँ की ओर देखा। माँ बिलकुल शांत थीं। जैसे वह समझ चुकी हो, कि खेत की मिट्टी अब उसकी मुट्ठी से फिसल चुकी है।

'माँ, आपने दादी से क्यों नहीं करवाया दस्तखत़?' रमेश ने रूखे स्वर में पूछा।

माँ ने आँखें उठाईं। थकी हुईं, पर शांत।

'बेटा, जिस घर में चूल्हे की आग, झोपड़ी की दीवार और रिश्तों का सम्मान सब बिना दस्तखत़ के चला करते थे। वहाँ दस्तख्त किसी की सोच में भी नहीं आते थे।

फिर भी माँ, कुछ लिखा-पढ़ी तो होनी ही चाहिए थी ?

माँ की आवाज़ धीमी और सपाट हो गई,

बेटा, तब रिश्तों में लिखा-पढ़ी नहीं होती थी।'मुँह से कही बात' ही काफी थी, तब हमें क्या पता था कि आखिर में सबकुछ दस्तख्त से ही तय होगा। शायद यही हमारी सबसे बड़ी भूल है,

हमने भरोसा लिखा नहीं और उन्होंने भरोसा माना नहीं।'

रमेश चुप रह गया,

उसने पहली बार जाना,

'कहा था' और 'लिखा था'

के बीच एक पूरा जीवन खाली हो सकता है।

अशोक सिंह की कविताएँ

तुम मानो न मानो

तुमसे प्रेम करना है
यह सोचकर नहीं किया था तुमसे प्रेम
सुसताने को तलाशा जब-जब कोई छाँव
चिलचिलाती धूप में तन्हा चलते
तब-तब पेड़ की धनी छाँव-सी मिली तुम

मिली अक्सर बिजली के खंभे सी राह में खड़ी
अंधेरी रात में सुनसान सड़क से
जब भी कभी गुजरना हुआ

थका-हारा जब-जब लड़खड़ाया
लरजते हुए चाहा टिकाना कहीं अपना सिर
वहीं पाया तुम्हारा कंधा

और तो और
जब जहाँ पड़ी जरूरत किसी की मदद की
वहाँ सिर्फ तुम्हारे ही हाथ दिखे
सुनायी पड़ी सबसे पहले तुम्हारी ही आवाज
संघर्श और दुख के क्षणों में
जब भी पुकारा अंदर से किसी को

और इस तरह चलते-चलते थककर एक दिन
जहाँ ठहरा रात्रि विश्राम के लिए
वह तुम्हारा ही घर होगा
यह सोचकर भी नहीं ठहरा था वहाँ!

एक पेड़ की तरह थी तुम मेरे लिए

मेरी कितनी जरूरत थी तुम्हें
या फिर तुम्हारी मुझे
इन सब बातों को लेकर अब
कोई हिसाब-किताब नहीं करना चाहता मैं

वैसे भी क्या रखा है अब
इन घीसी-पीटी पुरानी बातों की बतकही में

हाँ इतना भर जरूर कह सकता हूँ
एक लम्बे अंतराल के बाद
तुमसे अलग रहते हुए

घर से काम पर जाने
और काम से घर लौटने के रास्ते में
एक पेड़ की तरह थी वह मेरे लिए

एक पेड़ की तरह
जहाँ कभी कभार थोड़ा रूक कर
सुसता लिया करता था मैं
जिन्दगी की भाग-दौड़ से थक-हार कर !

अपनी तमाम कमजोरियाँ स्वीकारते हुए

यह सच है
मेरी कई कमजोरियाँ हैं

स्वीकारता हूँ मैं
अपनी वह तमाम कमजोरियाँ
जो गिनाना चाहती हो तुम मुझमें

पर क्या तुम जानती हो
मेरी तमाम कमजोरियों में
एक बड़ी कमजोरी तुम भी हो ?

उम्र के तीसरे पड़ाव पर प्रेम के बारे में सोचते हुए

उम्र के तीसरे पड़ाव पर
एक दिन अचानक
एक तलाकशुदा स्त्री से मिला

लिखा आधी रात तक जगकर
एक लम्बा पत्र

तय किया
कल खुद मिलकर
हाथो-हाथ दूंगा उसे

सुबह उठा तो देखा
विधवा स्त्री से प्रेम के जुर्म में
एक अधेड़-विधुर की हत्या की खबर
अखबार की सुर्खियों में थी!

यह कहते हुए शर्मिन्दा नहीं हूँ मैं

जब-जब दुखी हुआ
उदास हुआ
ईश्वर से ज्यादा
अपनी प्रेमिकाओं को याद किया

किसी देवी-देवता की नहीं
दीवारों पर लगी वे
प्रेमिकाओं की ही तस्वीरें थी
बेकारी के दिनों में
जिसने टूटने से बचाया हमें

और तो और
यह कहते हुए भी शर्मिन्दा नहीं हूँ मैं
कि मुझे विश्वास है
एक दिन बुढ़ापे में भी
उनके पीले पड़ गये
प्रेम-पत्र ही होंगे हमारे साथ
जिसे धर्म-ग्रंथों की तरह बांच
और भजनों की तरह गा कर काट लूंगा मैं
अपने बाकी बचे उम्र का अकेलापन !

दुख में तुम्हारी हँसी

जब-जब मेरी फटेहाली
फटे जूते में ढुकी कील-सी
पाँव में चुभती थी

तब-तब
मोतियों से चमकते
तुम्हारे दाँतों की दुधिया-हँसी
मुझे अंधेरे में
आगे का रास्ता दिखाती थी।

जनमत शोध संस्थान, पुराना दुमका
केवटपाडा, दुमका - 814101 (झारखण्ड)
मो- 9431339804

योगेंद्र पांडेय की कविताएँ

1. एक आतंकवादी से संवाद...

किसी को मारने के बजाय
किसी की जान बचा लिए होते तो
न जाने कितनी माताओं की दुआएं
तुम्हे मिली होती और तुम
जीते जी जरूर महसूस करते
धरती पर जन्नत का अथाह सुख।

तुम्हारे हाथ क्यों नहीं काँपे
उन प्रेमिकाओं के प्रेमियों को गोली मारते समय
जो जीवन का रंग देखने आये थे
कश्मीर के वादियों में।

एक बहेलिया के बाण से घायल क्रौंच पक्षी के दुख से आहत होकर
अनायास हृदय सिंधु से होकर बह निकला था
एक हत्यारे के कंठ से
दुनिया का पहला छंद-

'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधी काममोहितम्'।

काश तुम्हारा पत्थर हृदय भी
पिघल गया होता!
काश तुम्हारे हृदय में उमड़ गयी होती करुणा!
काश तुम अपने हाथ की बन्दूक
तोड़ कर फेंक दिए होते!
या फिर तुम्हारी बन्दूक की गोलियाँ चली होती
उन नफ़रत फैलाने वालों के सीने पर
जो तुम्हें सिर्फ एक जिन्दा लाश बना कर
खिलौने की तरह करते हैं इस्तेमाल
मानवता को करते हैं शर्मसार।

तुम्हारे हाथों में बन्दूक की जगह
होने चाहिए थे प्रेम के दो फूल
कलमा की जगह तुम गाते
प्रेम के गीत
करुणा भरे शब्द होते तुम्हारी पहचान
मानवता की सेवा होता तुम्हारा धर्म।

एक बात तुम जरूर याद रखना
नफ़रत की आग लगाने पर
तुम्हारे ऊपर भी उठेंगी लपटें
और एक दिन तुम भी जल कर राख़ हो जाओगे
अपनी ही लगाई हुई
नफरत की आग से।।

वे जो प्रेम में उपेक्षित हैं...

वे जो प्रेम में उपेक्षित हैं
मैं उनके लिए गीत लिखूंगा,
मेरे मुख से छंद फूट पड़ेगा
विरह में तपती
वियोगिनी को देख।

मेरे शब्दों में दुख बोध होगा
प्रेम में ठगे हुए प्रेमियों का,
मेरी कविता की प्रशंसा करेंगे
टूटे हृदय वाले
मैं कविता लिखूंगा
प्रेम में सर्वस्व हारे हुए
दीवानों पर।

जब तक सृष्टि में संचार रहेगा
जन्म लेंगी
हजारों प्रेम कहानियां
जब तक धरती और बादल के
बीच दूरी रहेगी
तब तक लिखें जायेंगे
विरह गीत।

निष्प्राण पत्थर की मूरत में
प्राण भरने के लिए
गाए जायेंगे मेरे गीत
मंत्रोचार की तरह।

मैं लिखूंगा उन प्रेमियों की गाथा
जो लड़ते हैं समाज से
अपने प्रेम को जिंदा रखने के लिए।
जब जब ऑनर किलिंग के नाम पर
मारे जायेंगे प्रेमी युगल
तब तब मेरी कलम रचेगी
एक महाकाव्य
जो एकमात्र गवाह होगा
सच्चा प्रेम करने वालों के लिए।

ज़रा ठहरो...

ज़रा ठहरो और सोचो
कि तुमने क्या कुछ खो दिया है
सबकुछ पाने की तलाश में।

इस भागती हुई दुनिया में
ठहरना जरूरी है
जरूरी है छूटे हुए रिश्तों को
बटोरना।
ठहर कर देखो
जिंदगी का
बदलता हुआ रंग
ठहर कर महसूस करो
अंतरात्मा का उमंग।

ज़रा ठहरो
कि कहीं तुम
दूर न चले जाना
खुद अपने आप से।।

4. बुद्धम शरणम गच्छामि...

बुद्ध जीवन के सहज मार्ग के देवता हैं
बुद्ध पथ प्रदर्शक हैं
सरल और पवित्र मानवता के,
बुद्ध के बिना जीव के भीतर
एक अशांत तृष्णा और
व्याकुलता है।

बुद्ध के बिना जीवन का
कोई लक्ष्य नहीं
बुद्ध देवता हैं

अहिंसा और परोपकार के।

बुद्ध प्रेम हैं
बुद्ध त्याग हैं
बुद्ध तपस्या हैं
बुद्ध अंधेरे में प्रकाशपुंज हैं
बुद्ध अंतरात्मा के सौंदर्य हैं।

अज्ञानता के मार्ग पर चल रही मानवता
कुंठित होकर घायल है,
हिंसा और अहम का अंधकार
दुःख का कारण है
बुद्ध मार्ग हैं
सहज स्वाभिमान के
बुद्ध प्रणेता हैं
सद्कर्म सन्मार्ग के।

शांतचित, मौन बुद्ध की प्रतिमा
मन की व्याकुलता को दूर करती है
बुद्ध के निकट बैठकर
परम् आनंद की अनुभूति होती है
बुद्ध देवता हैं
शांति और स्थिरता के।

आज जब यह दुनिया
बारूद के ढेर पर खड़ी है
तो आवश्यकता है एक
शांति दूत की
आवश्यकता है एक नए
धर्मचक्र प्रवर्तक की।

हे बुद्ध ! तुम्हे मानवता पुकारती है
तुम्हे आना होगा
एक नई दुनिया सजाने के लिए
तुम्हे आना होगा
अधर्म और हिंसा को
मिटाने के लिए।

हे बुद्ध!
युगों युगों तक
तुम्हारी राह तकते हुए हम गायेंगे
बुद्धम शरणम गच्छामि!!

मोबाइल जिंदगी...

मनोज शाह मानस

एक 'लाइक' छूट जाने के बाद
टूट गया था एक संबंध
एक ही 'कमेंट' में
फिर जुड़ गया संबंध...!

एक ही 'शेयर' से
टूट गया था एक घर
एक ही 'पोस्ट' से
बिछड़ गया परिवार...!

एक शीशा की स्क्रीन में
बंद है हम तुम सब
'क्लिक' और 'स्क्रोल' में
बंधे हैं हम तुम सब...!

तुमने पूछा था ना
मैंने तुम्हें भुला दिया कहकर
मोबाइल देखो तो...,
मैंने कमेंट किया है...!

'मैं इंसान...'

मैं हूं...!
दूसरों का दुख नाटक लगना
अपना दुख शाश्वत दिखाना
सुविधा अनुकूल विचार बदलना
असहाय को न देखना...

दूसरे लोग
विधि विधान को माने
स्वयं को
विधि विधान से ऊपर जाने...

समस्त जगत में
अधिकार जमाएं
और दूसरों के हानि में
स्वयं मुस्कुराए...

प्यार मोहब्बत
खुद ढूंढते फिरते
दूसरों को अपना
बुखार भी नहीं देते...

रास्ते बदलने वाला भी मैं हूं
फ़रिश्ते बदलने वाला भी मैं हूं...

हां जी...!
वही मैं हूं...!!
मैं इंसान...!!!

-नारायणा गांव, नई दिल्ली

जीवन सुखी बनाएँ

डॉ. केवलकृष्ण पाठक जींद

सच ही है हम नहीं सोचते,
अपने को हम नहीं जानते
हैं क्या और क्या करना है
हमें सच्चाई पर चलना है
काम, क्रोध,लोभ मोह माया
इनके कारण सत्य गंवाया
बिना सोचे झगड़ा करते हैं
झूठ फरेब में उलझे रहते हैं
सच्चाई को नहीं जानते
मन जो कहता वही मानते
अच्छा हो, अपने को जानें
अंतर्मन को हम पहचानें
यदि हम स्वयं जाग जायें
तभी जीवन सुखी बनायें

-आनन्द निवास गीता कालोनी जींद
126102(हरियाणा)

संस्कृति, समाज और हम पर केंद्रित दीपक कुमार जी की पुस्तक आतम खबर

–शिवेन्द्र

'आतम खबर' यानि आतम के बहाने अतीत की खबर

'आतम खबर' इतिहास की पुस्तक होते हुए भी इतिहास की किताब नहीं है कहा जाना चाहिए कि यह किताब जागृत मन की चेतना की किताब है जो मन में चल रहे इतिहास के विचारों से सीधे संवाद कराते हुए पाठक को विवश कर देती है बने-बनाये अपने ही आधुनिक या उत्तर आधुनिक विचारों की समीक्षा करने के लिए। एक तरह से यह किताब पाठकों की बौद्धिक चेतना को दुबारा से दुहराने व सुधारने वाली इतिहास विषयक किताब है। प्रस्तुत किताब इतिहास की किताब होते हुए भी किसी हितोपदेश की तरह यह किसी मायावी सम्मोहन में पाठकों को नहीं डालती इसमें जो है सारा कुछ खुला खुला है। पठनीय ऐसा कि पढ़ो तो पढ़ते चले जाओ लगता है कि पाठक आरवेल के उपन्यास 1984 या एनिमल फार्म ही पढ़ रहा हो। पढ़ने के दौरान लगातार यह सोचते, गुनते व विचारते हुए कि इतिहास को भी मनोरंजक तरीके से गंभीर अर्थबोध के साथ पढ़ा जा सकता है।

इतिहास पर कुछ लिखना खतरनाक कम नहीं होता हम जानते हैं कि अतीत का भविष्योन्मुख होना अतीत की तार्किक गतिशीलता पर निर्भर करता है। जाहिर है जड़ एवं जाहिल अतीत न तो भूत में सार्थक रहता है, न ही वर्तमान में उल्लेखनीय, न ही उसमें ऐसे कारक होते हैं जो भविष्य की भूमिका को निर्धारित कर सकने वाले हों। हमारी मानव सभ्यता का अतीत सिन्धु-घाटी की सभ्यता, मोसोपोटामिया की सभ्यता,आर्यो की गतिशीलता, मुगलों व राजपूतों की हमलावर संस्कृति व ठाट-बाट

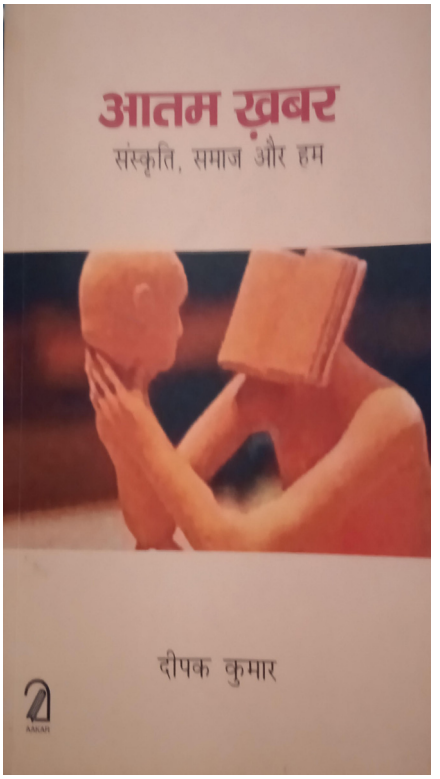

या अंग्रेजों की कुटिल साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों के आधार पर देखने से यह कत्तई भ्रम नहीं रह जाता कि यहॉ का मध्यम वर्गीय या निम्नवर्गीय समाज उन कथित इतिहास के स्वर्ण-कालों में भी काफी बुरी हालत में छटपटाते हुए अपनी मृत्यु की प्रतिक्षा में ही रहा है। सत्ता-संस्कृति अपने भिन्न-भिन्न रूपों में हर काल में लगभग एक ही तरह की रही है। हर सत्ता का साझा लक्ष्य जनता की अभिव्यक्तियों का दमन करते हुए शान्ति-व्यवस्था सुनिश्चित करने का रहा है। शान्ति-व्यवस्था की स्थापना के लिए सत्ता या सत्ता-समूहों द्वारा जिन-जिन उपायों को विधि-सम्मत या समाज-सम्मत बताया जाता रहा है, वे उपाय अपने मूल रूप में कमकर जनता या गरीब श्रमजीवी जनता समूहों के लिए घृणित दर्जे तक घृणित हुआ करते थे फलस्वरूप सचेतन व श्रमजीवी-सामाजिक समूहों का पशु-जीवन में बदल जाना या बदलते जाना नियति बन जाती थी।

अतीत का शक्तिशाली वर्ग, सत्ता-वर्ग का रूप स्वयंभू तरीके से हासिल कर लेता था। उसका सत्ता-वर्ग में रूपान्तरण चमत्कारी या दैवी-कृपाओं के आधार पर नहीं हुआ करता था। सत्ता-वर्ग में रूपान्तरण के लिए केवल शक्ति-सम्पन्नता ही आवश्यक थी। वैदिक-काल व पुराण-काल की सत्ता-संस्कृति भी शक्ति के विभिन्न श्रोतों की केन्द्रीयता की ही रही है। शक्ति के विभिन्न साधनों-संसाधनों की विभिन्न निर्मितियॉ इस तथ्य का स्पष्ट रूप से खुलासा करती हैं कि उस दौर में 'हमला' एवं 'हत्या' ये दो ऐसी कार्यवाहियों थीं जो विजेता बनने के लिए आवश्यक और धर्मसम्मत भी थीं।

इतिहास ज्यों-ज्यों काल का भेद करता गया त्यों-त्यों बीते कालों पर कालिख चढ़ाता गया (जिसे ही इतिहासकार सभ्यता मान लिया करते थे)। दण्डकारण्य के लोक का कालगत विलोपीकरण इतिहास की गतिशीलता का निर्णायक तत्व बनता गया तथा इसी विलोपीकरण की प्रक्रिया ने समाज को सभ्य एवं असभ्य, शिष्ट तथा अशिष्ट, जंगली एवं नागर समूहों में विखंडित भी किया। अभिजात्य एवं नागर समूहों ने खुद को दण्डकारण्य संस्कृति से अलगियाते हुए अपने को कुछ विशेष श्रेणी में स्थापित कर लिया।

श्रम एवं संघर्ष की दण्डकारण्य संस्कृति जो श्रम एवं संघर्ष के फलस्वरूप

उपजे विवेक के प्रयोगों में गति पकड़ रही थी तथा तत्कालीन परिस्थितियों में समायोजित होने के लिए ज्ञान व तकनीक के अन्वेषण में लगी थी, ऐसे समूहों को हासिए पर धकेलते हुए नागर समूहों ने श्रम एवं संघर्ष के बजाय, परोपजीविता, शोषण, दमन एवं अत्याचार के बल पर शक्ति के श्रोतों का केन्द्रीकरण करना शुरू कर दिया। हमारे पुरखों के सामाजिक, राजनीतिक ऐतिहासिक क्षेत्रों में इस प्रकार से अवसरवादी मध्य-वर्ग व अभिजनों का प्रवेश हुआ। यह तथ्य सर्वमान्य है कि मानव का प्रकृति के साथ हर काल में द्वन्दात्मक रिश्ता रहा है। इसी खास एवं विवेक सम्मत रिश्ते ने मानव को प्रकृति के साथ सदैव संघर्षशील रहने के लिए निर्देशित किया। इसे काल की या इतिहास की गतिशीलता भी कहा जा सकता है।

'आतम खबर' पुस्तक हमें सावधान करते हुए समझाने का काम करती है कि हम दुनिया के अन्य देशों या समाजों से आखिर पिछड़े क्यों रह गये, हम चॉद पर क्यों नहीं जा पाये, कम्प्यूटर तथा मोबाइल में लगने वाले चिपों को क्यों नहीं बना पाये दर असल हम इन आविष्कारों के बारे में गुनते ही कहां थे? हमें पता ही कहां था कि आविष्कार ही मानव सभ्यता को आगे बढ़ाएंगे। हम तो छत्रा, चॅवर और मुकुटों की चमकों में मगन रहने वाले लोग थे जो सदैव कल्पित स्वर्ग की सैर पर रहा करते थे। उस समय हमारा काम घोड़ों, हाथियों ऊँटों से चल जाया करता था जरूरत पड़ी तो हाथ में भाला, गड़ासा, तीर धनुष आदि ले लिए और किसी कमजोर क्षेत्रा को उसकी कमजोरी का लाभ उठा कर जीत लिए एक राज से दूसरे राज को, किसी राजा का कतल कर दिए तो किसी को वनवास दे दिए। हम उस अतीत में 'हमला' करने की पूरी प्रक्रिया को प्राथमिकता पर रखा करते थे और युद्ध को मानव सभ्यता का बहुत महत्वपूर्ण काम(युद्ध को गीता में यज्ञ माना गया है) माना करते थे(यह जानते हुए कि युद्ध किसी का भला नहीं करता, मारे सभी जाते हैं चाहे विजेता हो या विजित)। हम आगे तो तब बढ़ते जब महसूसते कि हम पिछड़ रहे हैं। हम कभी महसूस ही नहीं कर पाये कि हम अनुसंधान ही नहीं ज्ञान-विज्ञान के किसी क्षेत्रा में पिछड़ रहे हैं। उस समय भी जब दुनिया दूरबीन बना रही थीं, शीशा तराश रही थी? बाबर जब हमारे देश में तोपें (बारूद का एक खिलौना) लेकर आया था उस समय भी हम खाली नहीं थे हम कहीं मन्दिर बना रहे थे, मस्जिद बना रहे थे, मकबरा बना रहे थे या कोई रंग महल बना रहे थे कहा जाना चाहिए कि हम उस समय पत्थरों से दोस्ती करके 'पाषाण-लिपि' गढ़ने व रचने में लगे हुए थे।

हम मान कर चला करते थे कि पत्थरों पर का लिखा तक्षशिला की लाइब्रेरी की तरह तोडा व ढहाया नहीं जा सकता वैसे भी पाथर पर लिखा मिटता नहीं। अतीत के समय में यह समझ ही नहीं थी कि पत्थरों से ढोका, पटिया, गिट्टी जाने क्या क्या चीजें निकाली जा सकती हैं और उनका एक मुकम्मल बाजार बनाया जा सकता है। सोनभद्र की बात करें तो यहां एक पहाड़ी होना कई कई गॉवों से कीमती है। सोनभद्र की पूरी कृषि-भूमि के राजस्व से हजारों गुना राजस्व एक पहाड़ी से आ रहा है वह भी तमाम भ्रष्टाचारों के बाद। आजकल उन्हीं पहाडों व पत्थरों से विज्ञान की नई लिपि तोड़-फोड़, खनन आदि के माध्यम से अरबों रुपये कमाये जा रहे हैं। हमारे अतीत की लिपि दूसरी थी विज्ञान की लिपि बाजार समर्थित है। जो जोरों से पढ़ी जा रही है पूरी दुनिया में।

दीपक कुमार जी आतम खबर में अनुसंधान के क्षेत्रा में जिसे पिछड़ना बता रहे हैं वह तो हमारे सत्ताप्रमुखों की उपलब्धियां थीं वे चाहते ही नहीं थे कि उनके अलावा कोई दूसरा विकसित हो और वे खुद बहुत विकसित थे उन्हें चाहिए ही क्या था। उनकी प्रशंसा करने वाले साहित्यकारों, कलाकारों आदि की फौज थी, कामक्रीड़ा के लिए रंगमहल थे, तोपों की सलामी उन्हें मिला करती थी, युद्धों के माध्यमों से रानियों तक को तलाश लेते थे उनके लिए कभी चॉद का मुह टेढ़ा नहीं था। वे तो मार-काट, युद्ध, दमन आदि को ही विकसित होना माना वा जाना करते थे। उस दौर में अनुसंधान के बारे में हमारे राजाओं-महाराजाओं को दिमाग खपाने की जरूरत ही क्या थी। हमारे देश में जब कार वगैरह नहीं बना करते थे उस समय भी हमारे राजाओं महाराजाओं के पास कार के काफिले हुआ करते थे दुनिया का हर अनुसंधान उनके पास होता था और जब नहीं होता था तो उसे ब्रिटिश काल में अंग्रेज उपलब्ध करा दिया करते थे। इसी काम को मुगल भी अपने जमाने में किया करते थे।

दीपक कुमार जी जिस साफगेई से हमारे अतीत का विवरण प्रस्तुत करते हैं वह अद्भुत है अद्भतु इसलिए भी कि वे बहुत कुछ कहने के लिए जिसे वे कहना उचित नही मानते उसे कहने के लिए अपने मामू को तलाश लेते हैं काश हम लोगों के साथ भी ऐसे मामू होते तो हम भी आधुनिक मानव सभ्यता में घुस चुके बाजार के बारे में कुछ लिख पाते। मामू अपने अन्दाज में एक किताब 'सुल्तानाज ड्रीम' के माध्यम से बहुत कुछ कह जाते हैं...

'रोकय्या सुल्ताना(एक घरेलू बेगम) 'सुल्तानाज ड्रीम' नामक एक किताब 1905 में लिखी है, जो एक घरेल महिला है। इस किताब में मर्द औरतों का काम संभालते हैं और औरतें राज-काज का वह भी विज्ञान-तकनीक के सहारे। जब पड़ोसी देश ने इन पर चढ़ाई की तो इन तकनीकपरस्त औरतों ने सौर्य ऊर्जा से उनको भून दिया। ये बिजली से खेती करती हैं, और हवाई कार से उड़ती हैं... किम आश्चर्यम!

मामू इसकी तुलना हिन्द स्वराज्य से करते हैं और कहते हैं कि 'एक घरेलू बेगम बैरिस्टर बाबू(गॉधी) से आगे थी।'

तो ये हैं दीपक कुमार जी के मामू, मामू खामोश रहने वालों में से नहीं हैं और न ही वे ऐसे भारतीय हैं जो सवाल दर सवाल पूछने को अनुशासन-हीनता मानते हों वे तो खुले

दिमाग के हैं और स्वच्छता के सन्दर्भ में सवाल करते हैं..

'फर्ज कीजिए सवा सौ करोड़ भारतीय अगर ट्वायलेट पेपर का इस्तेमाल करने लगें फिर पेड़ों का क्या होगा?'

भ्रष्टाचार के खिलाफ वाले आन्दोलन से मामू खुश हैं और उसके बहाने कहते हैं...

'अगर गोमुख ही गन्दा हो जाये तो प्रयाग में गंगा कैसे साफ मिलेंगी?'

'पहले भी नारे लगते थे कि इसलाम खतरे में है, हिन्दू खतरे में है एक की आबादी घट रही है या दूसरे की बढ़ रही है। एक दूसरे को कट्टर कहते कहते दोनों कट्टर हो गये, खुसरो-वासवन्ना तो कबके इतिहास हो चुके सावरकर-जिन्ना जीवन्त हैं। मामू इसे सिर्फ इतिहास की गति ही नहीं न्यूटन का सिद्धान्त मानते हैं। दंगे इसी क्रिया-प्रतिक्रया के अन्तर्गत ही तो होते हैं।'

अनुसंधान न करने के कारणों से अगर हम पिछड़े रह गये जो सच है तो उसका हमारे कथित राजे-महाराजे या नबाब ही रहे हैं जो इतिहास के लिए किसी जमाने में सबसे आवश्यक एवं प्रिय विषय हुआ करते थे। भला हो कुछ भारतीयों का जिन्होंने अंग्रेजों के जमाने में अपने अपने अनुसंधानों का लोहा पूर विश्व में मनवाया। इसका सन्दर्भ दीपक जी प्रस्तुत किताब में बहुत ही उल्लास से उठाते हैं।

आजादी के बाद भारत की तस्वीर बदलने लगती है पर तब तक हम इतना पीछे जा चुके होते हैं के संभलना मुश्किल हो गया और यही पीछे होना हमारे लिए चुनौती थी जिससे लगातार हम अब भी टकरा रहे हैं। यह टकराहट हमें तमाम नये क्षेत्रों की तरफ भी ले जा रही है। जैसे यही कि हम अभी तक अपने यहां जाति, धर्म, गोत्रा आदि पर ही शोध कर रहे हैं, राम की ऐतिहासिकता पर शोध कर रहे हैं, कृष्ण पर शोध कर रहे हैं, पता लगा रहे हैं कि कृष्ण की द्वारिका पुरी कहां है आदि आदि। अतीत से आगे बढ़ कर दीपक जी हमें औपनिवेशिक आधुनिकता की तरफ ले जाते हैं बहुत ही बारीकी से औपनिवेशिक आधुनिकता को भारत के आगे बढ़ने का एक माध्यम बताते हैं जो सही भी है इसी दौर में हमारे देश में तमाम शिक्षण संस्थान आदि खोले गये कुछ अंग्रेजों द्वारा तो कुछ प्रबुद्ध भारतीयों द्वारा। इसी दौर में राष्ट्रवाद तथा स्वदेशी की बात भी तेजी पकड़ी। कुछ समाज सुधारक भी इसी दौर में लोगों को जागरूक करने के लिए आगे आये कहा जाना चाहिए कि औपनिवेशिक आधुनिकता ने हमारी ऑखें खोलने का काम किया और हम अपनी ऑखों से भारत को देखने लगे हमें समझ में आने लगा कि हमें अभी बहुत कुछ करना है कहीं न कहीं हमारा विश्व गुरु होने वाला धमंड टूटने लगा।

दीपक जी के औपनिवेशिक आधुनिकता का काव्यात्मक वर्णन मामू के बहाने करते हैं देखिए...

'मामू रुढ़िवादी होते हुए भी अंग्रेजी सलाहियत के हिमायतगार हैं,आप मनुवादी भी हैं और मैकाले पुत्रा भी। मैकाले साहब ने अंग्रेजी में पढ़ना लिखना अनिवार्य बनाया था...मामू के मुताबिक..भारत क्या अपितु एशिया का पूरा ज्ञान-भण्डार किसी यूरोपियन लाइब्रेरी के एक आलमारी से ज्यादा का हकदार नहीं है हमारे पौराणिक भूगोल-खगोल ऐसे कि कोई अंग्रेज किशोरी भी हस दे। अब हसने की बारी हमारी है हमारे लोग उनके देश में उन्हीं को उनकी भाषा पढ़ा रहे हैं मगर इसे सीखने में मामू को चने चबाने पडे। स्कूल के दिनों में नेसफिल्ड ग्रामर को सरस्वती पूजा के दिन उनके चरणों पर रखना पड़ा। अंग्रेजी फिल्में चोरी से देखा, अंग्रेजी दा लोगों से दोस्ती करना पड़ा फिर भी मामू को गुमान है कि उनको पढ़ने-पढ़ाने का मौका मिला, नौकरी मिली और देश-विदेश घूमने का मौका भी।'

तो हम मामू के बहाने आपनिवशिक आधुनिकता का चित्रा बना सकते हैं कुल मिला कर एक रास्ता निकला कि हमें अपने देश के बारे में सोचना है और नये ज्ञान मार्ग पर चलना है।

दुख की बात है कि हम आज तक उच्च शिक्षा तथा प्राथमिक शिक्षा दोनों का एक समरूप सिलेबस नहीं बना पाये हैं जाने क्या हो गया है कि हमें समान नागरिक संहिता बनाने के बारे में सोचना पड़ रहा है जबकि हमें समान शिक्षा संहिता के बारे में, समान कृषि नीति के बारे में, संभव बराबरी के बारे में आदमी और आदमी के बीच की खांई को पाटने के बारे में कुछ विशेष करना चाहिए पर नहीं हम ऐसा नहीं सोच पा रहे। हमें समाज विज्ञान तथा राजनीति विज्ञान के तहत अनुसंधान करना चाहिए कि कि हमारे देश में एक प्रतिशत लोग अस्सी फीसदी संपदा पर कैसे काबिज हो गये?

बहरहाल एक विचारणीय किताब के लिए दीपक कुमार जी को बधाई आशा है उनकी अगली किताब भी इससे अधिक प्रभावशाली होगी।

प्रकाशक – आकर बुक्स, 28 ई पॉकेट 4 4 मयूर विहार फेस 1 दिल्ली 110 091

आस्था, दर्शन और शोध का समन्वय 'सुन्दरकाण्ड रहस्य मीमांसा' की गहन पड़ताल

सुन्दरकाण्ड रहस्य मीमांसा : आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विवेचना
समीक्षकः उमेश कुमार सिंह

भारतीय आध्यात्मिक परंपरा में श्रीरामचरितमानस केवल एक काव्यग्रंथ नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन का व्यापक विधान है। इसके पंचम सोपान 'सुन्दरकाण्ड' को सदियों से विशेष महत्त्व प्राप्त है, क्योंकि इसमें भक्ति, साहस, विवेक और आत्मसमर्पण का अद्वितीय संगम दिखाई देता है। इसी सुन्दरकाण्ड को केंद्र में रखकर लेखक आनन्द सिंह ने 'सुन्दरकाण्ड रहस्य मीमांसा : आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विवेचना' के माध्यम से एक गहन शोधपरक और तात्त्विक व्याख्या प्रस्तुत की है। यह कृति केवल कथा-प्रस्तुति नहीं, बल्कि भाव, दर्शन और आध्यात्मिक संकेतों का सूक्ष्म विश्लेषण है।

लेखक की पूर्व प्रकाशित कृतियाँ–'प्रवाह', 'मानस-गंगाः-श्रीहनुमान चालीसा-चालीसा में मानस' तथा 'मानस-गंगाः-श्रीहनुमानचालीसा-एक आध्यात्मिक एवं दार्शनिक रहस्य'–उनकी चिंतन-परंपरा की स्पष्ट पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती हैं। उसी क्रम की यह द्वितीय कड़ी सुन्दरकाण्ड के माध्यम से भक्ति-साहित्य को एक नवीन दृष्टि देती है। लेखक का मानना है कि सुन्दरकाण्ड केवल घटनाओं का वर्णन नहीं, बल्कि मानवीय चेतना के उत्कर्ष का प्रतीक है।

'सुन्दर' शब्द के बारंबार प्रयोग और उसके अंक-तत्वों की व्याख्या करते हुए लेखक इसे पूर्णता का बोधक सिद्ध करते हैं। नौ अंक की पूर्णता, पंच तत्वों का सांस्कृतिक महत्त्व और साठ दोहों की संरचना–इन

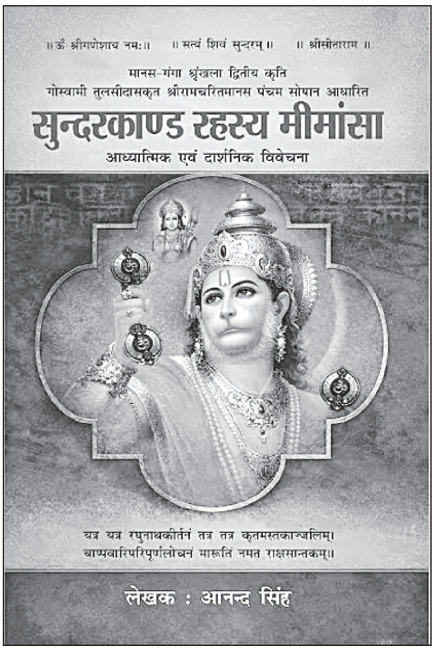

पुस्तक : सुन्दरकाण्ड रहस्य मीमांसा : आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विवेचना
लेखकः आनन्द सिंह
प्रकाशकः डायमंड पॉकेट बुक्स

सबका विश्लेषण यह संकेत देता है कि सुन्दरकाण्ड का पाठ मात्र धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि आत्मिक उन्नयन का साधन है। इस प्रकार पुस्तक आस्था और तर्क के संतुलन को साधती है।

कृति में श्रीहनुमान और सीता–इन दो प्रमुख चरित्रों के माध्यम से भक्ति और शांति की खोज को रूपायित किया गया है। लेखक ने श्रीहनुमान को केवल पराक्रम के प्रतीक के रूप में नहीं, बल्कि एक संत, एक आदर्श शिष्य और एक दार्शनिक व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया है। 'बिनु सतसंग बिबेक न होई' जैसी पंक्तियों के संदर्भ में विभीषण से भेंट को ज्ञान-प्राप्ति की प्रक्रिया से जोड़ा गया है। यह व्याख्या पाठक को कथा के पार जाकर उसके आध्यात्मिक आशय तक पहुँचने के लिए प्रेरित करती है।

सुन्दरकाण्ड के प्रसंग–सागर लंघन, लंका प्रवेश, अशोक वाटिका में सीतान्वेषण और लंका-दहन–इन सबका विश्लेषण प्रतीकात्मक धरातल पर किया गया है। लेखक के अनुसार, सागर जीवन की चुनौतियों का प्रतीक है, लंका भौतिक मोह का और सीता आत्मा की शांति का। इस प्रकार श्रीहनुमान की यात्रा आत्मा की खोज और अंतर्मन की विजय का द्योतक बन जाती है। यह दृष्टिकोण पुस्तक को सामान्य टीका-ग्रंथों से अलग पहचान देता है।

आनन्द सिंह की भाषा खड़ी बोली हिंदी पर आधारित होते हुए भी संस्कृतनिष्ठ शब्दावली से समृद्ध है। कहीं-कहीं उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का संयमित प्रयोग भी दिखाई देता है, जिससे आधुनिक पाठक से संवाद स्थापित होता है। उनकी शैली में अध्यात्म और यथार्थ का संतुलित समावेश है। वे भावुकता में बहते नहीं, बल्कि तर्क और प्रमाण के साथ अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं। यही कारण है कि पुस्तक श्रद्धालु पाठक के साथ-साथ शोधार्थियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

विशेष उल्लेखनीय यह है कि लेखक ने सुन्दरकाण्ड की तीन फलश्रुतियों–सुख-भवन, संसय-समन और दवन-विषाद–का विश्लेषण करते हुए इसे मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में भी देखा है। आधुनिक समय में मानसिक तनाव और अस्थिरता के संदर्भ में यह विवेचना प्रासंगिक प्रतीत होती है। लेखक का निष्कर्ष है कि 'राम-नाम' का गुणगान केवल धार्मिक कर्मकांड नहीं, बल्कि

आत्मिक संतुलन का साधन है।

पुस्तक का एक महत्वपूर्ण पक्ष इसका वैश्विक परिप्रेक्ष्य है। लेखक ने संकेत किया है कि श्रीरामचरितमानस का प्रभाव भारत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि फीजी, मॉरीशस, सूरीनाम और अन्य देशों में भी इसका व्यापक प्रचार हुआ। इससे स्पष्ट होता है कि यह कृति सांस्कृतिक एकता और प्रवासी भारतीय समाज के आध्यात्मिक जीवन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

प्रकाशन की दृष्टि से डायमंड पॉकेट बुक्स ने पुस्तक को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया है। मुद्रण स्पष्ट है और पाठ-संरचना सुवाच्य। धार्मिक-दार्शनिक ग्रंथों के प्रकाशन में इस प्रकाशन-गृह का अनुभव पुस्तक की गुणवत्ता में परिलक्षित होता है।

समग्रतः 'सुन्दरकाण्ड रहस्य मीमांसा : आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विवेचना' एक ऐसी कृति है, जो आस्था को तर्क से, भक्ति को दर्शन से और कथा को जीवन-दृष्टि से जोड़ती है। यह पुस्तक न केवल सुन्दरकाण्ड के पाठकों के लिए उपयोगी है, बल्कि उन सभी के लिए भी प्रासंगिक है जो भारतीय आध्यात्मिक साहित्य की गहराइयों को समझना चाहते हैं। लेखक ने सेवा और आत्मसमर्पण के प्रतीक श्रीहनुमान के माध्यम से यह संदेश दिया है कि जीवन में साहस, निष्ठा और विवेक के बिना भक्ति अधूरी है।

आनन्द सिंह की यह कृति समकालीन हिंदी आध्यात्मिक लेखन में एक गंभीर और शोधपूर्ण हस्तक्षेप के रूप में देखी जा सकती है। यह पुस्तक पाठक को केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि मनन और आत्मचिंतन के लिए आमंत्रित करती है। ●

आस्था, राष्ट्रभाव और प्रकृति चेतना की काव्य-प्रतिध्वनिः स्मृति श्रीवास्तव का 'अन्तर्ध्वनि'

समीक्षक : उमेश कुमार सिंह

डायमंड पॉकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित स्मृति श्रीवास्तव का तृतीय काव्य संग्रह 'अन्तर्ध्वनि' समकालीन हिंदी काव्यधारा में एक महत्वपूर्ण हस्तक्षेप के रूप में उभरता है। हिंदी साहित्य में एम.ए. उपाधि प्राप्त करने के उपरांत लेखिका ने अपना जीवन हिंदी भाषा, भारतीय संस्कृति और मानवीय मूल्यों के संवर्धन को समर्पित किया है। नई दिल्ली के सेंट थॉमस स्कूल में दो दशकों तक हिंदी एवं संस्कृत का अध्यापन, दिल्ली विश्वविद्यालय के नेत्रहीन विद्यार्थियों के लिए दुर्लभ ग्रंथों का वाचन-रिकॉर्डिंग तथा वंचित महिलाओं के लिए सामाजिक सक्रियता–इन सभी अनुभवों की गहन मानवीय संवेदना इस कृति की पंक्तियों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

'अन्तर्ध्वनि' शीर्षक अपने आप में दार्शनिक गहराई लिए हुए है। ध्वनि केवल श्रव्य तरंग नहीं, बल्कि चेतना की कंपनशील ऊर्जा है; और जब वही ध्वनि अंतःकरण में प्रतिध्वनित होती है, तो वह अंतर्ध्वनि बन जाती है। संग्रह की भूमिका में व्यक्त विचार–'सर्वे भवन्तु सुखिनः'–पूरे काव्य-संसार का नैतिक और आध्यात्मिक आधार निर्मित करता है। यह कृति किसी एक भाव-क्षेत्र तक सीमित नहीं रहती, बल्कि भक्ति, प्रकृति, राष्ट्रप्रेम, सामाजिक जागृति और अंतर्मन के सूक्ष्म द्वंद्व तक विस्तृत काव्य-परिसर रचती है।

संग्रह का आरंभ गणेश वंदना से होता है और माँ सरस्वती, नमामि शंकर तथा दुर्गा स्तुति के माध्यम से भारतीय अध्यात्म की सांस्कृतिक निरंतरता को स्थापित करता है। 'जग में चहुँ दिश आनंद सरसे, सबके आँगन आशीष बरसे' जैसी पंक्तियाँ कवयित्री के सार्वभौमिक मंगलकामना भाव को उद्घाटित करती हैं। यहाँ भक्ति पलायन नहीं, बल्कि सकारात्मक ऊर्जा का स्रोत है, जो व्यक्ति को करुणा और समभाव की ओर प्रेरित करती है।

'पर्व-पुष्पांजलि' खंड भारतीय उत्सव-परंपरा का काव्यात्मक अभिलेख है। नूतन वर्ष से लेकर मकर संक्रांति, रक्षाबंधन, हरतालिका तीज और शिक्षक दिवस तक, प्रत्येक पर्व को केवल अनुष्ठान के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक एकात्मता के प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया गया है। मकर संक्रांति पर सूर्य को काव्य-अर्घ्य देते हुए कवयित्री भारतीय लोक-संस्कृति की विविधता में निहित एकता को रेखांकित करती हैं–पोंगल, बिहू, लोहड़ी जैसे विभिन्न नामों के बावजूद अंतर्ध्वनि एक ही हैः सौहार्द और समरसता।

'मातृभूमि के गौरव' खंड राष्ट्रभाव की ओजस्वी अभिव्यक्ति है। स्वतंत्रता के प्रहरियों और शहीदों की शौर्यगाथाएँ केवल ऐतिहासिक स्मरण नहीं, बल्कि नैतिक प्रेरणा का स्रोत हैं। कवयित्री भारतभूमि को ऋणस्वरूप स्वीकार करती हैं और संस्कृति के स्वर्णिम स्वर, सद्भाव तथा विश्वबंधुत्व की भावना को समकालीन परिप्रेक्ष्य में पुनर्स्थापित करती हैं। यहाँ राष्ट्रप्रेम उग्रता नहीं, बल्कि जिम्मेदारी और कृतज्ञता का भाव है।

प्रकृति-केंद्रित खंड 'हरित धरा का आह्वान' संग्रह की विशिष्ट उपलब्धि है। 'पृथ्वी को सांस लेने दो' और 'पर्वत पुकार रहे

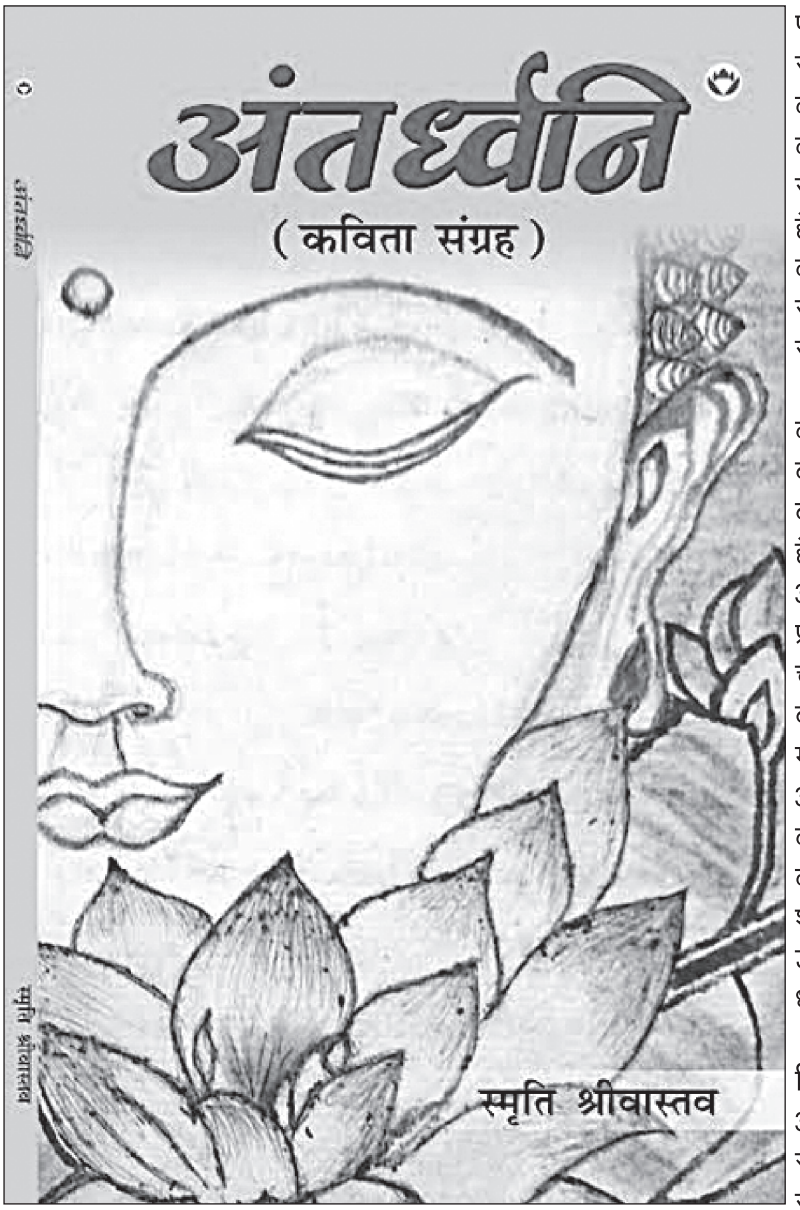

हैं' जैसी कविताएँ पर्यावरणीय संकट पर संवेदनशील हस्तक्षेप हैं। कवयित्री धरती को एक नारी-रूपक में देखती हैं, जो अति-दोहन से व्यथित है। प्रकृति का यह मानवीकरण केवल अलंकारिक युक्ति नहीं, बल्कि पारिस्थितिक चेतना का काव्यात्मक प्रतिरोध है। गिरती पत्तियों की लय, रिमझिम बूंदों की मधुरिमा, शरद का आगमन और सितारों की रागिनी–इन सबके माध्यम से प्रकृति एक जीवंत संवादिनी बन जाती है।

'जागृति के स्वर' खंड में कवयित्री समकालीन सामाजिक यथार्थ से मुठभेड़ करती हैं। 'लाइक और कमेंट की दुनिया' डिजिटल युग की आभासी संवेदनाओं पर सूक्ष्म व्यंग्य है, तो 'रिवाज़ और परंपराएँ' तथा 'पारंपरिक बनाम समकालीन' बदलते सामाजिक मूल्यों पर विमर्श प्रस्तुत करती हैं। 'बेटियाँ' और 'शक्ति स्वरूपा' स्त्री-सशक्तिकरण की सशक्त अभिव्यक्ति हैं, जहाँ नारी को करुणा और सामर्थ्य–दोनों का संगम माना गया है। बुजुर्गों की सीख, रिश्तों की जटिलता और सहानुभूति बनाम युद्ध जैसे विषयों के माध्यम से संग्रह सामाजिक नैतिकता की पुनर्समीक्षा करता है।

अंतिम खंड 'अंतर्मन के दीप' संग्रह की भाव-गहराई का चरम है। यहाँ कविताएँ आत्मसंवाद बन जाती हैं–'अनकही प्रीति', 'मौन दस्तक', 'अंतर्मन का द्वंद्व' और 'आत्म संतुष्टि' जैसे शीर्षक मनुष्य की भीतरी परतों को उद्घाटित करते हैं। जीवन की एकरसता, सपनों का संबल, स्मृतियों की ऊष्मा और समर्पण की निस्तब्धता–इन सबके बीच कवयित्री एक संतुलित जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करती हैं। भाषा सरल है, पर भाव-संरचना गहरी और बहुस्तरीय।

संपूर्ण संग्रह का काव्य-शिल्प सहजता और संप्रेषणीयता पर आधारित है। अलंकारों का संयमित प्रयोग, लयात्मक प्रवाह और भावात्मक प्रामाणिकता इसे पाठक के निकट ले आते हैं। स्मृति श्रीवास्तव की कविताएँ दुरूह बिंब-भाषा का आश्रय नहीं लेतीं; वे सीधे हृदय से संवाद करती हैं। यही कारण है कि उनका काव्य बौद्धिक विश्लेषण के साथ-साथ भावनात्मक स्पर्श भी प्रदान करता है।

'अन्तर्ध्वनि' केवल कविताओं का संग्रह नहीं, बल्कि आत्मा और समाज के बीच सतत संवाद का सेतु है। यह कृति बताती है कि आध्यात्मिकता, राष्ट्रभाव, प्रकृति-प्रेम और सामाजिक चेतना परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक ही व्यापक मानवीय संवेदना के विविध आयाम हैं। स्मृति श्रीवास्तव की लेखनी पाठक को बाह्य कोलाहल से भीतर की शांति की ओर ले जाती है, जहाँ अंतःचेतना की सूक्ष्म ध्वनि सुनाई देती है।

यह कृति समकालीन हिंदी साहित्य में एक सार्थक और मूल्यपरक योगदान के रूप में रेखांकित की जा सकती है। 'अन्तर्ध्वनि' न केवल पाठकीय संवेदना को जाग्रत करती है, बल्कि सामाजिक और आध्यात्मिक आत्मावलोकन की प्रेरणा भी देती है। यह संग्रह इस विश्वास को पुष्ट करता है कि जब कविता अंतर्मन से उपजती है, तो उसकी ध्वनि समय की सीमाओं को पार कर स्थायी प्रभाव छोड़ती है।

पुस्तक : अन्तर्ध्वनि
लेखिका : स्मृति श्रीवास्तव
प्रकाशकः डायमंड पॉकेट बुक्स
समीक्षकः उमेश कुमार सिंह

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : महाप्राण कवि जिन्होंने समय को अपनी धारा में बहाया

सुरेश सिंह बैस 'शाश्वत'

बसंत पंचमी संकेत है बसंत के पर्दापण का, मां सरस्वती की पूजा अर्चना का, और उस महान कवि सिरमौर के जन्म स्मरण का, जिसे अपने अद्भूत व्यक्तित्व के कारण 'निराला' उपनाम को धारण किया। इनका पूरा नाम सूर्यकांत त्रिपाठी निराला था। इनका जन्म 1896 को बसंत पंचमी के ही दिन पश्चिम बंगाल के महिषादल में हुआ था।

निराला, छायावादी कवि के रूप में विख्यात हैं, किन्तु गद्य क्षेत्र में भी निराला की उतनी ही पकड़ थी ,इसीलिये यहां भी इनकी उतनी ही प्रसिद्धि हैं। इन्होंने गद्य की प्रायः सभी प्रचलित विधाओं में लिखा हैं, किन्तु अन्य छायावादी कवियों की तरह उनकी काव्य कृतियों की अधिक विवेचना हुई है। निराला का गद्य संसार वैविध्यों से परिपूर्ण था। इन्होंने अपने समकालीन सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक वातावरण के यथार्थ चित्रण पर जोर दिया है, जिसमें यदाकदा अपने व्यक्तिगत अनुभवों और अनुभूतियों का भी इन्होंने सुंदर समावेश किया है।

निराला का जीवन और व्यक्तित्व विचित्रताओं से परिपूर्ण रहा है, निराला जी के काव्य संसार को समय या काल की सीमाओं में बांधना असंभव हैं। इनकी लेखनी ने प्रगतिवाद और प्रयोगवादी साहित्य में भी अपनी उपस्थिति दृढ़ता से दर्ज कराई हैं। इन्होंने समय के साथ बहने की अपेक्षा समय को अपने पीछे बहने को विवश किया। ऐसे युगदृष्टा थे निराली जी। निरालाजी के पिता का नाम पंडित रामसहाय त्रिपाठी था। बचपन में ही मां का देहावसान हो गया। निराला ने बचपन से ही कविताएं लिखना शुरु कर दिया था। इन्हें हिन्दी, बंगला, संस्कृत, अंग्रेजी, फारसी और उर्दू की भाषाओं पर अधिकार

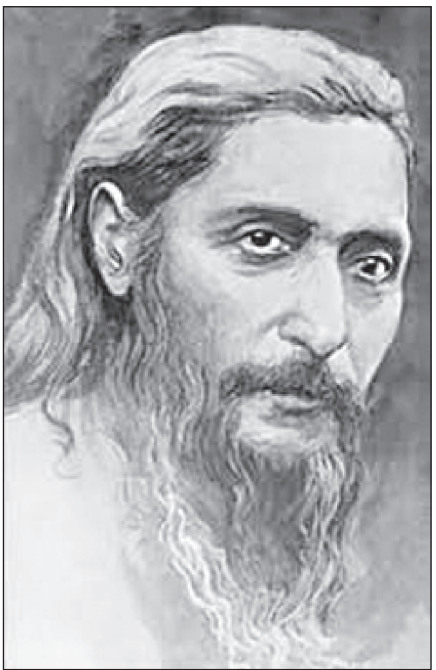

21 फरवरी निराला के जन्मदिवस पर विशेष

प्राप्त था। निराला के काव्य में परस्पर विरोधी प्रवृत्तियां मिलती है, जो उनके संघर्ष भरे जीवन का प्रतिफलन बन गया। समाज की अव्यवस्था और विषमताओं के बीच निराला का समन्वयकारी व्यक्तित्व उभरकर सामने आया, तभी तो इनके काव्य में संघर्ष और क्रांति के स्वरों का सिंहनाद स्पष्ट सुनाई देता है। 'जागो एक बार फिर' का क्रांतिकारी स्वर आज भी भारतीय युवकों को भारतीय संस्कृति व उनके अपारशक्ति की याद दिलाती है।

जागो फिर एक बार सिंह की गोद से
छिनता रे शिशु कॉन रहते प्राण, रे अजान ।।

निराला की कविताओं में स्वाधीनता, शोषण के खिलाफ नवचेतना का संचार होता है। इनका विवाह 1911 ई. में डलमऊ के पंडित रामदयाल की पुत्री मनोहरा देवी के साथ हुआ। पुत्र रामकृष्ण और पुत्री छोटे ही थे, कि पत्नी का निधन हो गया । पुत्री सरोज की असामयिक मृत्यु ने उनके दुख से विदीर्ण हृदय कराह कर 'बोल उठा 1.' दुख ही जीवन की कथा रही क्या कहूं आज जो नहीं कहीं नहीं.... '

2. 'कन्ये मैं पिता.... निरर्थक था
कुछ भी तेरे हित कर न सका'

पुत्री की मृत्यु के बाद निराला शारीरिक कष्टों और मानसिक वेदना से जूझने लगे। निराला की शारीरिक बनावट अत्यंत प्रभावशाली थी उनकी वेशभूषा भी उनके शरीर की भांति सामान्य से अलग हटकर थी। पर पत्नी और पुत्री के वियोग और आर्थिक तंगी ने उन्हें इस ओर से उदासीन बना दिया। इनका स्वभाग मस्त था। जो कुछ मिला, खा लिया। जो पहनने को मिला, उसी को पहन लिया। कभी भी फल की चिंता नहीं की।

समन्वय के सम्पादन काल में निराला को स्वामी विवेकानंद के संपूर्ण साहित्य के अध्ययन का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसीलिये उनकी कृतियों में विवेकानंद के दर्शनों के प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। बाद में कलकत्ता से प्रकाशित हास्यव्यंग प्रधान साप्ताहिक 'मतवाला' में संपादकीय कार्य भी किया। इसी पत्र के माध्यम से ही इन्हें 'निराला' उपनाम से ख्याति मिली थी। आचार्य शिवपूजन सहाय के बाद मतवाला और उसके कर्ताधर्ता मतवाला मंडल में पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का विशेष आदर सहित उल्लेख किया गया है। वह बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि निराला जी कसौटी स्तंभ में गरगज सिंह वर्मा, साहित्य शार्दूल के नाम से स्तंभ लेखन करते थे। निराला जी अपनी कसौटी पर कस, खरे खोटे की पहचान बताते

थे। निराला के की भावमयी कविताओं ने हमें विशेष रूप से तृप्त किया है। हिन्दी संसार को आपने सालभर तक नवीन संदेश दिया। मतवाला ने जो अपूर्ण युगान्तर उपस्थित किया, उसमें बंधुवर निराला का पूर्ण हाथ रहा। उनकी ही विशेषताओं के कारण मतवाला ने सर्वसाधारण के समक्ष युग परिवर्तन का दृश्य उपस्थित किया मतवाला के द्वितीय वर्ष के प्रथम अंक में इनकी यह कविता बसंत के नव संदेश की सूचना देती है-

कितने ही विघ्नों का जाल, जटिल अगम, विस्तृत पथ पर विकराल, कंटक कर्दम भय श्रम निर्मम कितने शूल, हिंस्त्र निशाचर भूषण कंदर पशु संकुल पथ धनगत अगम अकूल, पारपार करके आये, हे नूतन सार्थक जीवन ले ओय श्रम कण में बंधु सकल श्रम, सिर पर कितना गर से ब्रज बादल, उपलवृष्टि फिर शीत घोर फिर ग्रीष्म प्रबल, साधक मन के निश्चल, पथ के संचल, प्रतिज्ञा के अचल अटल पथ पूरा करके आये, स्वागत स्वागत है प्रियदर्शन, आये नवजीवन भर लाये ।।

एक बार अपने भाषण में गांधी जी ने कह दिया कि हिन्दी में कोई बड़ा लेखक नहीं है, तो यह सुनकर उन्होंने गांधी जी को खूब खरी खोटी सहित सत्य का भान कराया था। महाप्राण निराला का यह अहंकार व्यक्तिगत न होकर अपन देश की साहित्य और संस्कृति से संबंद्ध था। वे इनकी उपेक्षा या अनादर को कैसे सहन कर सकते थे। हिन्दी भाषा के प्रति इनका इतना प्रेम था कि एक बार किसी पत्रकार ने इन्होंने कह दिया कि मेरी इच्छा है कि मेरी मृत्यु के बाद अस्थियां सारे देश में बिखरा दी जायें । निराला हिन्दी साहित्यकार के साक्षात बसंत थे। इन्होंने साहित्य और हिन्दी सेवा लिये अपना सारा जीवन अर्पित कर दिया था। ●

कस्तूरबा गांधी ने मोहनदास को महात्मा बनने की दिशा दी

महात्मा गांधी की जीवन संगिनी श्रीमती कस्तुरबा गांधी ताउम्र गांधीजी का साथ निभाकर चलीं, बड़े से बड़े मुसीबत में भी वे गांधीजी का संबल बनकर उन्हें महान बना गईं। कहते हैं न कि हर सफल आदमी के पीछे स्त्री का हाथ होता है। उसकी सफलता और उन्नति के लिए जिम्मेदार स्त्री होती है। ठीक इस कहावत को चरितार्य करती हुई श्रीमती कस्तूरबा गांधी भी मोहन चंद करम चंद के महात्मा गांधी जैसा वैश्विक और विराट व्यक्तित्व धारण करने के पीछे पूर्ण रूप से जिम्मेदार रही है। स्वयं महात्मा गांधी ने भी एक अवसर पर कहा है कि 'मेरे जीवन में मेरी पत्नी का मुझे बहुत सहयोग और समर्पण मिला, जो न मिलता तो शायद आज जो मैं हूं वह न होता।'

सन् 1882 में महज बाल्यावस्था में ही कस्तूरबा का विवाह मोहन चंद से हो गया था। मोहन चंद की ही उम्र उस समय मात्र तेरह वर्ष की थी। कस्तूरबा मोहनचंद के पिता काबा गांधी के मित्र की लड़की थी। अतः एक ही उम्र व पूर्व परिचित होने के कारण वे दोनों हमजोली की भांति साथ-साथ खेलते थे। परिवार के धार्मिक वातावरण में मोहन और कस्तूरबा के महान संस्कारों का निर्माण हो रहा था। धीरे-धीरे दोनों बड़े होते गए और दोनों के. व्यवहार में परिपक्वता भी आती गई। , मोहन चंद के विलायत में कानून की पढ़ाई करने का समय

आया। एक पत्नी ने अपने पति की शिक्षा और संस्कार के लिए अपनी इच्छाओं को हंसते-हंसते दमित कर दिया। जब मोहन उनके पास विदाई लेने आए थे तो उन्होंने मौन रहकर ही बहुत कुछ निःशब्द कहकर उन्हें जानें की स्वीकृति दे दी।

गांधी जब अफ्रीका की दुबारा यात्रा पर गए तो उनके साथ श्रीमती कस्तूरबा व उनके दो पुत्र भी साथ गए थे। उन दिनों वे यूरोपीय पोशाक में रहते थे। उन्होंने कस्तूरबा और बच्चों को भी विशेष पोशाक पहनने का आदेश दिया, जिससे वे गोरों द्वारा अपमानित न हो पाएं। इतना ही नहीं उन्होंने कस्तूरबा को छुरी-कांटे से खाना भी सिखलाया। इसमें कस्तूरबा को बड़ा अटपटा लगा। परंतु जिद्दी पति के आगे पत्नी विवश थी। समर्पण में ही उन्हें सुख मिलता था।

भारत में एक बार गांधी पेचिस से बहुत बीमार पड़ गए। उनकी रुग्णावस्था को देखते हुए डाक्टरों ने सलाह दिया कि आपको दूध लेना होगा। तभी आपमें शक्ति आएगी। तब उन्होंने कहा कि मैं तो दूध न लेने का प्रण कर चुका हूं। इसी समय चतुर कस्तूरबा ने तत्काल टोककर कहा- 'आपने बकरी के दूध की कसम नहीं खाई है'। गांधी यह सुनकर कस्तूरबा की ओर ताकने लगे और उनसें कहा कि बात तो ठीक हैं, प्रण करते समय मेरे मन में गाय माता और भैंस के दूध का ध्यान था। डाक्टर ने भी बकरी के दूध के पक्ष में राय दे दी। इस प्रकार प्रत्युत्पन्नमति से कस्तूरबा ने विकट स्थिति को अपने कौशल से सम्हाला था।

कस्तूरबाजी गांधीजी की तरह बहुत सादगी से रहती थीं। वे गहना जेवर नहीं पहनती थी। कपड़े के नाम पर वे सूती की सफेद धोती, ब्लाउज पहनती थी। अपने संतानों को भी उन्होंने खर्चीले विद्यालयों में नहीं पढ़ाया और न उन्हें मंहगे वस्त्र ही पहनाए। 22 फरवरी, 1944 को कस्तूरबा ने गांधी जी की गोद में अंतिम सांस ली। उन्होंने मृत्यु के कुछ क्षण पूर्व यह इच्छा प्रगट की कि मेरा दाह कर्म गांधी जी द्वारा तैयार की गई खादी की साड़ी के साथ किया जाए।

भारत -बांग्लादेश द्विपक्षीय संबंधों में सुधार की जरूरत

डॉ. प्रभात कुमार

भारत और बांग्लादेश के बीच संबंध इतिहास, संस्कृति, भाषा और भौगोलिक निकटता पर आधारित हैं। दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंध 1971 में बांग्लादेश के स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उभरने के बाद से सहयोग और चुनौतियों के विभिन्न चरणों से गुज़रे हैं। यह संबंध दक्षिण एशिया में विशिष्ट है, जिसे साझा संघर्षों, जन-से-जन संपर्क और क्षेत्रीय हितों ने आकार दिया है। दोनों देशों के संबंधों की नींव 1971 के बांग्लादेश मुक्ति संग्राम में निहित है। स्वतंत्रता से पहले बांग्लादेश को पूर्वी पाकिस्तान के नाम से जाना जाता था और उसे पश्चिमी पाकिस्तान से राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक भेदभाव का सामना करना पड़ता था। 1970 के आम चुनावों में आवामी लीग को स्पष्ट जनादेश मिलने के बावजूद सत्ता हस्तांतरण न होने से व्यापक विरोध हुआ, जिसके बाद पाकिस्तानी सेना ने दमनात्मक कार्रवाई की। इस संकट के दौरान भारत ने लगभग एक करोड़ बांग्लादेशी शरणार्थियों को आश्रय दिया। भारत ने मुक्ति बाहिनी (बांग्लादेशी स्वतंत्रता सेनानियों) को राजनीतिक, कूटनीतिक और सैन्य समर्थन भी प्रदान किया। दिसंबर 1971 के भारत-पाक युद्ध के परिणामस्वरूप पाकिस्तानी सेना ने आत्मसमर्पण किया और बांग्लादेश एक संप्रभु राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में आया। 6 दिसंबर 1971 को भारत ने बांग्लादेश को औपचारिक मान्यता दी, जिससे दोनों देशों के बीच एक गहरा भावनात्मक और राजनीतिक बंधन स्थापित हुआ।

स्वतंत्रता के बाद भारत और बांग्लादेश ने 1972 में मैत्री, सहयोग और शांति संधि पर हस्ताक्षर किए, जिसकी अवधि 25 वर्ष थी। इस संधि ने राजनीतिक, आर्थिक और सुरक्षा क्षेत्रों में घनिष्ठ सहयोग की आधारशिला रखी। भारत ने बांग्लादेश के पुनर्निर्माण में सहायता की और मार्च 1972 तक भारतीय सेनाओं की वापसी सुनिश्चित कर बांग्लादेश की संप्रभुता के प्रति सम्मान को रेखांकित किया।

1975 में शेख मुजीबुर रहमान की हत्या बांग्लादेश की आंतरिक राजनीति और उसकी विदेश नीति में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुई। इसके बाद आए सैन्य शासन ने भारत के प्रति अधिक सतर्क और कभी-कभी दूरस्थ रुख अपनाया तथा अन्य क्षेत्रीय और वैश्विक शक्तियों से संबंध मजबूत किए। इस अवधि में अवैध प्रवासन, सीमा विवाद और विशेष रूप से गंगा नदी के जल बंटवारे जैसे मुद्दों पर दोनों देशों के बीच तनाव रहा। 1977 में गंगा जल बंटवारा समझौता एक महत्वपूर्ण कदम था, फिर भी आपसी अविश्वास पूरी तरह समाप्त नहीं हो सका। 1990 के दशक की शुरुआत में बांग्लादेश में लोकतंत्र की बहाली ने द्विपक्षीय संबंधों को नई दिशा दी। 1996 में 30 वर्षों के लिए गंगा जल बंटवारा संधि पर हस्ताक्षर हुए, जिसने जल वितरण के लिए एक स्थायी ढांचा प्रदान किया और इसे एक प्रमुख कूटनीतिक उपलब्धि माना गया। इस दौर में व्यापार, संपर्क, और सांस्कृतिक आदान-प्रदान जैसे क्षेत्रों में सहयोग बढ़ा।

वर्ष 2009 में शेख हसीना के प्रधानमंत्री बनने के बाद, भारत-बांग्लादेश संबंधों में उल्लेखनीय सकारात्मक परिवर्तन आया। उनकी सरकार ने सुरक्षा सहयोग को प्राथमिकता देते हुए भारत के साथ निकट संबंधों की नीति अपनाई। बांग्लादेश ने अपनी भूमि से संचालित भारत-विरोधी उग्रवादी समूहों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की, जिससे आपसी विश्वास में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। उच्चस्तरीय दौरों और समझौतों के माध्यम से ऊर्जा, बिजली, परिवहन और डिजिटल संपर्क जैसे क्षेत्रों में सहयोग सुदृढ़ हुआ। भारत ने बांग्लादेश को बुनियादी ढांचा विकास के लिए ऋण सहायता प्रदान की, जिसमें रेलवे, सड़कें और बंदरगाह शामिल हैं। बांग्लादेश भारत की 'एक्ट ईस्ट नीति' का भी महत्वपूर्ण साझेदार बनकर उभरा।

द्विपक्षीय संबंधों में एक ऐतिहासिक उपलब्धि 2015 में भूमि सीमा समझौते का कार्यान्वयन भी था। इसने दशकों पुराने सीमा विवादों, एन्क्लेव और प्रतिकूल कब्जों की समस्या का समाधान किया और सीमावर्ती क्षेत्रों में रहने वाले हजारों लोगों को लाभ पहुंचाया। भारत ने प्राकृतिक आपदाओं के दौरान मानवीय सहायता प्रदान करने और कोविड-19 महामारी जैसे अनेक संकट के क्षणों में भी बांग्लादेश का निरंतर सहयोग और समर्थन किया है।

तेजी से बदलते घटनाक्रम

लेकिन अगस्त 2024 में बांग्लादेशी प्रधानमंत्री शेख हसीना के पद छोड़ने के बाद से ही भारत और बांग्लादेश के संबंध अत्यंत ही नाजुक दौर से गुजर रहे हैं। दोनों देशों के बीच दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं और बांग्लादेश धीरे-धीरे पाकिस्तान के करीब जा रहा है। 1971 के बाद पहली बार इन दोनों देशों के बीच सीधे व्यापार और विमान सेवा की शुरुआत हुई है। दोनों देशों के द्वारा सैन्य सहयोग को भी आगे बढ़ाया जा रहा है। हाल ही में ढाका ने इस्लामाबाद से जेएफ-17 लड़ाकू विमान खरीदने की बात कही है। सैन्य प्रशिक्षण और सहयोग के जो कार्यक्रम पहले नई दिल्ली के साथ चला करते थे, वे

अब इस्लामाबाद के साथ चलाने के प्रयास हो रहे हैं।हाल के दिनों में, जब भारत ने जूट और वस्त्र उत्पादों के आयात पर भूमि मार्गों से प्रतिबंध लगाया, तब पाकिस्तान ने बांग्लादेश को कराची बंदरगाह के उपयोग की पेशकश की। शेख हसीना अक्सर भारत और बांग्लादेश के बीच 1965 से पहले की संपर्क व्यवस्था को बहाल करने की बात करती थीं; अब इस्लामाबाद पूर्ववर्ती बांग्लादेश-पाकिस्तान संबंधों को पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रहा है।

बांग्लादेश में वर्तमान में व्याप्त भारत-विरोधी भावनाओं का सबसे प्रमुख और तात्कालिक कारण अगस्त 2024 में शेख हसीना सरकार का पतन और उसके बाद के घटनाक्रम हैं। बांग्लादेशी जनता का एक बड़ा वर्ग यह मानता है कि भारत ने अपने रणनीतिक और सुरक्षा हितों को साधने के लिए पिछले 15 वर्षों तक हसीना के दमनकारी शासन का अटूट समर्थन किया। हसीना के भारत में शरण लेने और हाल ही में ढाका द्वारा उनके प्रत्यर्पण की मांग पर भारत के नकारात्मक रुख ने इस असंतोष को और गहरा कर दिया है, जिसे वहां के लोग आंतरिक न्याय प्रक्रिया में बाधा के रूप में देखते हैं। इसी कारण यूनुस सरकार के शासनकाल में भारत-विरोधी भावना और हिंदू अल्पसंख्यकों के खिलाफ हिंसा में तेजी से बढ़ोतरी देखने को मिली। बांग्लादेश में हिंदुओं के खिलाफ हिंसा कोई नई बात नहीं है। पूर्वी पाकिस्तान की आबादी में कभी लगभग एक-तिहाई हिस्सेदारी रखने वाले हिंदुओं की संख्या घटकर अब लगभग 8 प्रतिशत रह गई है। शेख मुजीबुर रहमान और शेख हसीना दोनों ही हिंदुओं को अवामी लीग का निकट राजनीतिक सहयोगी मानते थे और इसी कारण बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी (बीएनपी) की दो सरकारों और जनरल एर्शाद के शासनकाल के दौरान हिंदुओं को उत्पीड़न का सामना करना पड़ा।

पिछले कुछ महीनों में द्विपक्षीय संबंधों में हर एक कदम आगे बढ़ने पर दो कदम पीछे गए हैं। वर्षों की मेहनत से बनाए गए संपर्क गलियारों को दोनों पक्षों द्वारा उठाए गए विभिन्न कदमों के कारण वापस ले लिया गया है। इसी तरह, लगभग 20 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुँच चुका द्विपक्षीय व्यापार भी तेज़ी से गिर गया है। 2023 तक भारत द्वारा प्रतिवर्ष जारी किए जाने वाले लगभग 15 लाख वीज़ा जिनसे अनेक बांग्लादेशियों को भारत में चिकित्सा उपचार सहित कई लाभ मिलते थे भी अब अतीत की बात हो गए हैं। राजनीतिक उथल-पुथल के अलावा, सीमा प्रबंधन और जल संसाधनों के बंटवारे जैसे पुराने विवाद भी फिर से उभर आए हैं। भारतीय सीमा सुरक्षा बल (ँएइ) द्वारा सीमा पर होने वाली मौतों, जिनमें अक्सर किशोर और छात्र शामिल होते हैं, ने बांग्लादेशी नागरिकों में भारी रोष पैदा किया है। साथ ही, तीस्ता नदी के जल बंटवारे पर कोई ठोस समझौता न होना और दिसंबर 2026 में समाप्त होने वाली गंगा जल संधि को लेकर अनिश्चितता ने बांग्लादेश में जल सुरक्षा को लेकर चिंताएं बढ़ा दी हैं।

धार्मिक और पहचान की राजनीति ने भी इस तनाव को हवा दी है। भारत द्वारा बांग्लादेश में अल्पसंख्यक हिंदुओं की सुरक्षा पर जताई गई चिंता को वहां की अंतरिम सरकार और प्रदर्शनकारियों ने अक्सर 'अतिशयोक्तिपूर्ण' और 'हस्तक्षेपकारी' करार दिया है। दूसरी ओर, भारत में चल रहे एँ्, ंृ और ीँ जैसे कानूनों को बांग्लादेशी समाज के एक बड़े हिस्से में मुस्लिम विरोधी माना जाता है। असम और देश के अन्य हिस्सों में भासे बांग्लादेशी घुसपैठियों के खिलाफ मीडिया में जो नैरेटिव चल रहा है उसने दोनों देशों के बीच अविश्वास को जन्म दिया है और एक वैचारिक खाई पैदा कर दी है।

भविष्य

बांग्लादेश में हाल ही में चुनाव संपन्न हो गए हैं। इस 13वें संसदीय चुनावों में बीएनपी ने 297 में से 209 सीटें जीत ली हैं, जबकि दक्षिणपंथी जमात-ए-इस्लामी ने 68 सीटें हासिल की हैं। राष्ट्रीय चुनाव में भारी जीत दर्ज करने के बाद तारिक रहमान को बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी (बीएनपी) के नवनिर्वाचित सांसदों ने औपचारिक रूप से संसद का नेता और बांग्लादेश का अगला प्रधानमंत्री चुन लिया है। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने मई 2003 में संसद में अपने भाषण के दौरान उन्होंने कहा था कि आप दोस्त बदल सकते हैं, लेकिन पड़ोसी नहीं बदल सकते। इसी वर्ष चीन के पेकिंग विश्वविद्यालय में उन्होंने कहा था कि इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि अच्छे पड़ोसियों को एक-दूसरे के साथ वास्तव में भाईचारा बनाने से पहले, उन्हें पहले अपने बीच के मतभेदों को दूर करना होगा।

अतीत में भी भारत और बांग्लादेश के बीच मतभेद रहे हैं, बावजूद इसके कि दोनों देशों के बीच गहरी निकटता थी। तब इन मतभेदों को सुलझा लिया जाता था, क्योंकि संबंधों को आगे बढ़ाने की मंशा बनी रहती थी। अब स्पष्ट है कि यह स्थिति बदल चुकी है। वर्तमान द्विपक्षीय विमुखता के गंभीर और दूरगामी परिणाम हो सकते हैं, जिन्हें पलटना कठिन होगा। बांग्लादेशियों और भारतीयों के बड़े वर्ग आज भी मध्य मार्ग अपनाना चाहते हैं, किंतु दुर्भाग्यवश व्यक्तित्व और पूर्वाग्रह ही अब राज्य-से-राज्य संबंधों को दिशा दे रहे हैं। और दुर्भाग्य से, दोनों ओर वही वर्ग विमर्श पर हावी हैं। दिल्ली और ढाका को आपसी संबंधों को सुधारने के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। आने वाले समय में दोनों देशों को आपसी संबंध सुधारने पर काम करना चाहिएर्े बांग्लादेश की नई सरकार से यही उम्मीद है कि आने वाले समय में फिर से दोनों देशों के रिश्ते बेहतर करने की दिशा में प्रयास किया जाएगा।

एक अधिकारी ऐसा भी...

कर्तव्य, पर्यावरण और समाज सेवा का प्रेरक संगम

सरकारी सेवा को अक्सर केवल दायित्वों की सीमाओं में देखा जाता है, लेकिन कुछ अधिकारी ऐसे भी होते हैं जो अपने पद को समाज परिवर्तन का माध्यम बना देते हैं। ऐसे ही एक अधिकारी हैं प्रद्युम्न कुमार, जो वर्तमान में एटा जनपद के नगर पालिका परिषद जलेसर में अधिशासी अधिकारी के रूप में कार्यरत हैं। उन्होंने अपने शौक, संवेदनशीलता और समाज सेवा को प्रशासनिक कर्तव्यों से जोड़कर पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण और पर्यटन विकास के क्षेत्र में जो कार्य किए हैं, वे न केवल प्रशंसनीय हैं बल्कि अनुकरणीय भी हैं।

सोनभद्र से शुरू हुई हरियाली की कहानी

वर्ष 2015 से 2019 तक सोनभद्र जनपद के पिपरी, रेणुकूट और दुद्धी जैसे नगर पंचायतों में कार्य करते हुए प्रद्युम्न कुमार ने पर्यावरण संरक्षण को अपनी प्राथमिकता बनाया। किसानों को वितरित किए गए हजारों पौधे और नगरों में लगाए गए वृक्ष आज परिपक्व होकर हरियाली, छाया और फल दे रहे हैं। यह कार्य केवल पौधरोपण तक सीमित नहीं रहा, बल्कि संरक्षण और सतत देखभाल के कारण स्थायी परिणाम सामने आए।

झरना बस्ती और देव दीपावली की अनूठी पहल

सोनभद्र जिले में प्राकृतिक और धार्मिक पर्यटन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से झरना बस्ती में जल संरक्षण करते हुए झरने को संरक्षित किया गया। यहीं से देव दीपावली मनाने की जो परंपरा शुरू की गई, वह आज भव्य आयोजन का रूप ले चुकी है। यह पहल पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ स्थानीय संस्कृति और पर्यटन को भी नई पहचान देती

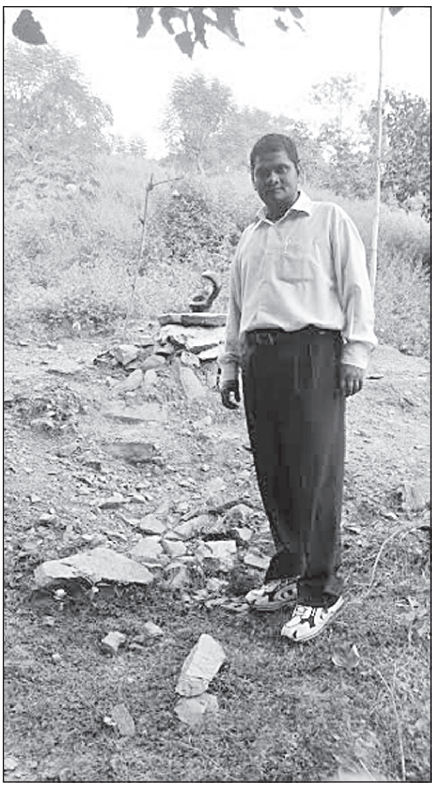

है।

गांधी पार्क और हरित नगरों की नींव

गांधीनगर, रेलवे कॉलोनी और कोयला बस्ती में विकसित किए गए गांधी पार्क आज पर्यावरण संरक्षण के जीवंत उदाहरण हैं। यहां लगाए गए वृक्ष न केवल वातावरण को शुद्ध कर रहे हैं, बल्कि फल-फूल देकर सामाजिक उपयोगिता भी निभा रहे हैं।

जालौन, बांदा और जैव विविधता का संरक्षण

जनपद जालौन के नगर पंचायत कोटरा, नदीगांव और एट जैसे नगरों में लगाए गए हजारों पौधे आज वृक्ष बन चुके हैं। कोटरा को प्राकृतिक, धार्मिक और ऐतिहासिक पर्यटन केंद्र के रूप में स्थापित करते हुए हजारों वर्ष पुराने मंदिरों, गढ़ियों और घाटों का संरक्षण किया गया। बीहड़ की बंजर भूमि पर जैव विविधता पार्क की स्थापना कर हजारों वृक्षों के साथ-साथ बेतवा नदी के संरक्षण का भी महत्वपूर्ण कार्य हुआ।

इसी क्रम में जनपद बांदा के बबेरू और तिंदवारी नगर पंचायतों में अल्प कार्यकाल के बावजूद जल संरक्षण और व्यापक पौधरोपण कर स्थायी छाप छोड़ी गई।

जलेसर में हरियाली की नई शुरुआत

वर्तमान में नगर पालिका परिषद जलेसर में तैनाती के साथ ही पर्यावरण, जल संरक्षण और ऐतिहासिक धरोहरों के संरक्षण का कार्य तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। नगर में लगाए गए हजारों पौधों के संरक्षण से जलेसर में हरियाली की अलख जगने लगी है और नागरिकों में भी पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ी है।

परिवार के साथ समाज सेवा

सेवा भावना केवल अधिकारी तक सीमित नहीं है। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती भारती कश्यप शिक्षा के क्षेत्र में प्रेरणास्रोत बनी हुई हैं। जनपद सोनभद्र, जालौन और एटा (जलेसर) जैसे छोटे कस्बों में, जहां अच्छे शिक्षकों का अभाव है, वहां वे बालिकाओं को निःशुल्क शैक्षिक मार्गदर्शन प्रदान कर रही हैं। यह प्रयास नारी शिक्षा को मजबूती देने के साथ-साथ सामाजिक सशक्तिकरण की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम है।

प्रेरणा का स्रोत

प्रद्युम्न कुमार और उनका परिवार यह सिद्ध करता है कि यदि इच्छा शक्ति हो तो प्रशासनिक दायित्वों के साथ समाज सेवा और पर्यावरण संरक्षण को भी प्रभावी रूप से आगे बढ़ाया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण और बालिका शिक्षा के क्षेत्र में उनका योगदान निस्संदेह अनेक लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत है–एक ऐसा उदाहरण, जो बताता है कि 'एक अधिकारी ऐसा भी' समाज की तस्वीर बदल सकता है।

अब जगन्नाथ पुरी के दर्शन होंगे आसान

क्या आप भी पुरी जगन्नाथ जाने का प्लान बना रहे हैं? तो आपको बता दें कि, भारतीय रेलवे ने इस टूर पैकेज की जानकारी आधिकारिक वेबसाइट पर लाइव की है। इस पैकेज में आपको घूमने के लिए गाड़ी की सुविधा दी जाएगी। सिर्फ 8000 रुपये के बजट में तमाम सुविधाओं के साथ आप आराम से जगन्नाथ जी के दर्शन करने का प्लान बना सकते हैं। आइए आपको बताते हैं इस टूर पैकेज में आपको क्या-क्या सुविधाएं मिलने वाली हैं।

पुरी टूर पैकेज कब से शुरू हो रहा है?

- इस टूर पैकेज की शुरुआत भुवनेश्वर से हो रही है।

- IRCTC के टूर पैकेज में आपको चिलिका, कोणार्क और पुरी घूमने का मौका मिलेगा।

- यह पैकेज 2 रात और 3 दिनों का है।

- आपको बता दें कि, 25 फरवरी से इस टूर पैकेज की शुरुआत हो रही है।

- जब पैकेज की शुरुआत हो जाएगी, तो आप हर दिन यात्रा जरुर करके आएंगे।

- इस पैकेज में आपको कैब के द्वारा यात्रा कराई जाएगी और घूमने के लिए कैब की सुविधा मिलेगी।

- आप गूगल पर पैकेज का नाम EXOTIC ODISHA EX BHUBANESWAR सर्च कर सकते हैं।

पैकेज फीस

- 2 लोगों के साथ यात्रा करने पर प्रति व्यक्ति पैकेज फीस 8625 रुपये है।

- अगर आप 3 लोगों के साथ यात्रा कर रहे हैं, तो आप प्रति व्यक्ति पैकेज फीस 8165 रुपये है।

- भारतीय रेल की आधिकारिक वेबसाइट से टिकट बुकिंग का तरीका आसान है।

पैकेज में मिलने वाली सुविधाएं

- 1 रात पुरी में होटल में ठहरने को मिलेगा।

- 2 दिन नाश्ता और 2 दिन रात का भोजन मिलेगा।

- सभी परिवहन और दर्शनीय स्थलों पर यात्रा के लिए एसी वाहन की सुविधा दी जाएगी।

- इस पैकेज में सभी लागू पार्किंग शुल्क और टोल शुल्क इस पैकेज फीस में शामिल नहीं होंगे।

- इसमें जीएसटी का खर्च भी शामिल है। बुकिंग करन के लिए आप भारतीय रेल की आधिकारिक वेबसाइट पर जा सकते हैं।

सस्ते में घूमें पूरा राजस्थान

क्या आप भी राजस्थान का टूर करना चाहते हैं? अब आप 30 हजार रुपये के अंदर राजस्थान घूमने का मौका मिल रहा है। दरअसल, भारतीय रेलवे टूर पैकेज लेकर आया है, जिसमें आप पूरा राजस्थान घूम सकते हैं। आपतो बता दें कि, 12 दिनों का यह टूर पैकेज है, जिसकी शुरुआत कोलकाता से होगी। इसका अर्थ है कि कोलकाता के लोग इस पैकेज से राजस्थान घूम सकते हैं। यदि आप अपने परिवार के साथ लंबी ट्रिप पर जाना चाहते हैं, तो यह टूर पैकेज आपके लिए है। आइए आपको बताते हैं इस पैकेज के बारे में-

इस पैकेज की शुरुआत कोलकाता से हो रही है।इसमें आपको जयपुर, अजमेर, पुष्कर, उदयपुर और जोधपुर घूमने का अवसर मिलेगा।यह पैकेज 12 रात और 13 दिनों का है।इस पैकेज के लिए आप हर शनिवार टिकट बुक कर सकती हैं।इस पैकेज के जरिए आपको ट्रेन से यात्रा करवाया जाएगा और घूमने के लिए कैब की सुविधा मिलेगी। आप इस पैकेज का नाम सर्च कर सकते हैं। टूर पैकेज का नाम ROYAL RAJASTHAN WITH CONFIRMED TRAIN TICKET EX KOLKATA है।पैकेज का कोड EHR137 है।

पैकेज फीस किस तरह से तय की गई है?- 2 लोग ट्रैवल करने पर पैकेज की फीस ज्यादा है। इसमें आपको 42460 रुपये देने होंगे। यदि आप 3 लोगों के साथ में यात्रा कर रहे हैं, तो पैकेज फीस कम है। 3 लोगों के लिए आपको 33780 रुपये है।प्रति व्यक्ति पैकेज फीस भरना होगा, हर व्यक्ति को अलग-अगल 33780 रुपये देने होंगे।वहीं, बच्चों के लिए पैकेज फीस 16415 रुपये है।

फलों के छिलके देंगे ग्लास स्किन वाला ग्लो

क्या आपने कभी फलों के छिलके को स्किन केयर किया है। दादी-नानी से अपनी त्वचा को नेचुरल ग्लोइंग बनाने के लिए संतरा के छिलके या फिर केला के छिलके का इस्तेमाल करती हैं। हम सभी तो फलों के छिलके के कूड़ेदान में फेंक देते हैं।

हाल ही में कुछ दिलचस्प वैज्ञानिक जानकारियों से पता चला है कि आलू के छिलके में पाया जाने वाला कैटेकोलेज एंजाइम डार्क सर्कल्स को कम करता है और केले के छिलके में मौजूद एस्टरिफाइड फैटी एसिड्स मुंहासों से लड़ते हैं और त्वचा को रिपेयर करते हैं। अब आप जब भी आलू छीलें या केला खाएं, तुरंत कूड़ेदान में न फेंके। अब इनके छिलके से आप स्किन केयर कर सकती हैं और इससे आपकी स्किन एकदम ग्लास की तरह शाइन करेगी।

आलू का छिलका

आलू के छिलके की अंदरूनी सफेद परत को सीधे आंखों के नीचे हल्के हाथों से रगड़ें। इसमें पाया जाने वाला प्राकृतिक कैटेकोलेज एंजाइम हल्के ब्लीच की तरह असर करता है। यह काले घेरों को कम करने, सूजन घटाने और आंखों के नीचे की थकावट दूर करने में सहायक हो सकता है। नियमित उपयोग से आंखों के आसपास की त्वचा अधिक साफ, ताजगीभरी और चमकदार नजर आने लगती है।

संतरे का छिलका

संतरे के छिलकों को अच्छी तरह धूप में सुखाकर बारीक पीस लें और पाउडर तैयार करें। इस पाउडर को दही, गुलाबजल या शहद में मिलाकर चेहरे पर पैक की तरह लगाएं। संतरे के छिलकों में विटामिन C प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो त्वचा में कोलेजन उत्पादन को बढ़ावा देता है। इससे रंगत निखरती है और काले धब्बों को कम करने में मदद मिल सकती है, जिससे त्वचा अधिक चमकदार और स्वस्थ दिखती है।

केले का छिलका

केले के छिलके की अंदरूनी मुलायम सतह को चेहरे पर लगभग 15-20 मिनट तक हल्के हाथों से मलें। इसमें पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट और प्राकृतिक फैटी एसिड त्वचा की देखभाल में सहायक होते हैं। ये मुंहासों को कम करने, त्वचा को मुलायम बनाने और धूप से हुए नुकसान को धीरे-धीरे ठीक करने में मदद कर सकते हैं। रूखी और बेजान त्वचा के लिए यह एक प्राकृतिक नमी बढ़ाने वाला उपाय माना जाता है, जिससे चेहरा अधिक ताजगीभरा और स्वस्थ दिख सकता है।

तरबूज का छिलका

तरबूज के छिलके की सफेद ठंडी साइड को चेहरे पर रगड़े। इसमें मौजूद सिट्रुलिन एमिनो एसिड त्वचा को शांत करता है, रेडनेस कम करता है और ड्राई स्किन को तुरंत हाइड्रेशन देता है। समर में यह किसी कूलिंग टोनर से कम नहीं है।

पपीते का छिलका

पपीते के छिलके की अंदर वाली साइड को चेहरे पर हल्के हाथों से रगड़ें। इसमें पाए जाने वाला पैपेन एंजाइम डेड स्किन सेल्स को धीरे-धीरे कम करता है। इससे आपकी त्वचा नेचुरल एक्सफोलिएट होती है और स्किन ग्लो भी करती है। यह टैन को रिमूव करता है।

राजस्थान में प्राकृतिक खेती बनेगी किसानों की आय बढ़ाने रास्ता

राजस्थान, जो अपनी सांस्कृतिक धरोहर और रेगिस्तानी भूभाग के लिए जाना जाता है, अब कृषि क्षेत्र में एक नई क्रांति की ओर बढ़ रहा है। हरित क्रांति के कारण आज हम कृषि उपज में आत्मनिर्भर बन गए हैं। लेकिन, हरित क्रांति के क्षेत्रों में मृदा के क्षरण, जैव विविधता की हानि, प्राकृतिक संसाधनों की कमी आदि के रूप में नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभाव भी बहुत अधिक दिखाई दे रहे हैं। सतत-संवहनीय कृषि पद्धतियों में से प्राकृतिक खेती जो हाल ही के समय में गति पकड़ रही है। यह 'स्थानीय पारिस्थितिकी के अनुसार की जाने वाली कृषि है और इसलिए इसे कृषि पारिस्थितिकी भी कहा जाता है। प्राकृतिक खेती इस राज्य के लिए सिर्फ एक कृषि पद्धति नहीं, बल्कि जलवायु परिवर्तन, जल संकट और मिट्टी के क्षरण जैसी समस्याओं का समाधान भी है। यह पद्धति राज्य के किसानों को आत्मनिर्भर बनाने और टिकाऊ विकास की दिशा में अग्रसर करने का सशक्त माध्यम बन सकती है।

एक दार्शनिक दृष्टिकोण

प्राकृतिक खेती एक दार्शनिक दृष्टिकोण पर आधारित है जो प्रकृति के स्वयं के ज्ञान को प्रतिबिंबित करती है, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्राकृतिक खेती को पुनर्योजी कृषि का एक रूप माना जाता है, जो ग्रह को बचाने के लिए एक प्रमुख रणनीति है। भारत में परंपरागत कृषि विकास योजना के तहत प्राकृतिक खेती को भारतीय प्राकृतिक कृषि पद्धति कार्यक्रम के रूप में बढ़ावा दिया जाता है। योजना का उद्देश्य बाहर से खरीदे जाने वाले आदानों के आयात को कम कर पारंपरिक स्वदेशी प्रथाओं को बढ़ावा देना है। प्राकृतिक खेती एक रसायन मुक्त कृषि पद्धति है जो स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों और पारंपरिक पद्धतियों का उपयोग करती है। यह कृषि पारिस्थितिकी पर आधारित है और फसलों, पेड़ों और पशुधन को एकीकृत करती है। प्राकृतिक खेती मृदा की गुणवत्ता और स्वास्थ्य में सुधार के लिये लाभकारी सूक्ष्मजीवों का भी उपयोग करती है।

राजस्थान में प्राकृतिक खेती का महत्व

जल संरक्षणः राजस्थान जैसे सूखा-प्रभावित राज्य में प्राकृतिक खेती जल की बचत करती है। यह तकनीक मिट्टी में नमी बनाए रखने में सहायक है, जिससे पानी की खपत में कमी आती है।

मिट्टी की उर्वरताः रसायनों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी की उर्वरता में गिरावट आई है। प्राकृतिक खेती से जैविक पोषक तत्व मिट्टी में लौटते हैं, जिससे मिट्टी स्वस्थ होती है।

कम लागत और अधिक लाभः प्राकृतिक खेती में स्थानीय संसाधनों का उपयोग किया जाता है, जिससे किसानों की लागत कम होती है। यह छोटे और सीमांत किसानों के लिए वरदान है।

स्वस्थ और जैविक उत्पादः प्राकृतिक खेती से उत्पादित अनाज, फल और सब्जियां रसायनों से मुक्त होते हैं, जो उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य के लिए बेहतर है।

सरकार की भूमिका और प्रयास

मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा द्वारा वर्मी कम्पोस्ट इकाई निर्माण की शुरुआत की गई है। इससे मृदा की जैविक व भौतिक स्थिति में सुधार लाया जा रहा है। जिससे मृदा की उर्वरता और पर्यावरण संतुलन बना रहेगा। वर्मी कम्पोस्ट, जिसे वर्मीकल्चर के माध्यम से तैयार किया जाता है, मृदा की जैविक और भौतिक स्थिति को सुधारने में मदद करता है। इसमें कृमि के उपयोग द्वारा मृदा में जैविक पदार्थों को विघटित किया जाता है, जिससे मृदा की उर्वरता बढ़ती है। उसकी संरचना में सुधार होता है। यह प्राकृतिक उर्वरक मृदा को समृद्ध करता है और पर्यावरण को भी सहेजता है। क्योंकि, इसमें रासायनिक तत्वों

की मात्रा कम होती है। इस पहल के माध्यम से न केवल मृदा की गुणवत्ता में सुधार होगा, बल्कि यह किसानों की लागत भी कम कर सकता है और पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में सहायक होगा। राजस्थान सरकार प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाएं चला रही है।

किसान प्रशिक्षण कार्यक्रम

किसानों को प्राकृतिक खेती के तरीकों और लाभों के बारे में जागरूक किया जा रहा है। योजना के माध्यम से प्राकृतिक खेती करने के इच्छुक कृषकों को प्राकृतिक खेती से होने वाले लाभ, रासायनिक कीटनाशक और उर्वरक उपयोग से होने वाले नुकसान, कम लागत से खेती करने की विधि, स्थानीय स्तर पर जैव उत्पाद यथा जीवामृत, बीजामृत, नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र आदि तैयार कर उपयोग में लेने की विधि की प्रायोगिक जानकारी दी गई है। जिसका उपयोग कृषकों द्वारा खेती में लागत कम करने एवं उच्च गुणवत्ता के उत्पाद पैदा करने में किया जा रहा है।

सब्सिडी और वित्तीय सहायता

प्राकृतिक खेती को अपनाने वाले किसानों को आर्थिक सहायता दी जा रही है। जैविक बाजार का विकासः जैविक उत्पादों के लिए एक स्थायी बाजार बनाने की दिशा में कदम उठाए जा रहे हैं।

सरसों की उपज बढ़ाने का वैज्ञानिक तरीका

थायोयूरिया एक जैव रसायन है। विभिन्न स्तरों पर किए गये अनुसंधानों और परिक्षणों से यह पाया गया है कि थायोयूरिया जैव रसायन के प्रयोग से सरसों फसल की उपज को बढाया जा सकता है। थायोयूरिया में करीब 42 प्रतिशत गंधक एवं 36 प्रतिशत नत्रजन होती है।

क्या है थायोयूरिया- थायोयूरिया जैव नियामक एक सल्फर हाइड्रिला युक्त रसायन है । इसके प्रयोग से पौधों के अन्दर सल्फर हाइड्रिला समूह की उपलब्धता बढने से पौधों में सूक्रोज ट्रान्सपोर्ट प्रोटीन अधिक सक्रिय हो जाता है । पौधों में दानों का भराव तीव्रता से होता है। यही कारण है कि थायोयूरिया जैव नियामक से उपचारित सरसों के पौधों में पुष्पक्रम के अन्तिम छोर पर स्थित फलियों में भी दाने बन जाते है। जबकि, अनुपचारित पौधों में ऐसी फलियां या तो झड़ जाती है अथवा अक्सर खाली रह जाती है । इस तरह थायोयूरिया के प्रयोग से पौधों मे फलियों की संख्या में वृद्धि होती है जो अन्ततः फ सल की उपज को बढाने में निर्णायक सिद्ध होती है।

यह होता है लाभ- सरसों की फसल में थायोयूरिया के छिड़काव से फसल को पाले की क्षति से भी बचाया जा सकता है। इसका मुख्य कारण थायोयूरिया में निहित गन्धक का सक्रिय रूप सल्फाहाईड्रिल समुह ही है । थायोयूरिया उपचारित सरसों के पौधें में चेंपा का आक्रमण भी कम देखा गया है। इसी तरह थायोयूरिया का छिडकाव एक प्रभावी सस्य जैव तकनीक के रूप में सरसों की उत्पादकता को बढाने में अत्यन्त कारगर भूमिका निभा सकता है। प्रारम्भिक परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि पानी की कमी में भी थायोयूरिया जैव नियामक के प्रयोग से पौधों को राहत दी जा सकती हैए फलतः फसल की उपज में बढोतरी होती है। अतः थायोयूरिया जैव नियामक के प्रयोग से सीमित सिंचाई से उगाई जाने वाली सरसों के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि प्राप्त की जा सकती है।

गाँव गिराँव हिन्दी मासिक पत्रिका
पाठकों के लिए gaongiraw.in
पर भी उपलब्ध।
अन्य वेबपेज के लिए देखें
www.gaongiraw.com
www.gaongirawsports.com

वास्तु दोष निवारण के असरदार उपाय

आज के आधुनिक समय में हर व्यक्ति अपने जीवन में शांति, सफलता और स्थिरता चाहता है, लेकिन अनजाने में किए गए निर्माण दोष या गलत दिशा में रखी वस्तुएं जीवन को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं। ऐसे में वास्तु दोष निवारण के प्रभावशाली उपाय अत्यंत आवश्यक हो जाते हैं। अच्छी बात यह है कि हर बार तोड़-फोड़ या महंगे बदलाव की जरूरत नहीं होती, बल्कि सरल वास्तु उपाय, सकारात्मक ऊर्जा संतुलन और सही दिशा ज्ञान से भी बड़े से बड़े वास्तु दोष को शांत किया जा सकता है।

यहां वास्तु दोष निवारण के 5 सबसे असरदार और आसान उपाय दिए गए हैं:

1. मुख्य द्वार पर 'स्वास्तिक' और 'तोरण'

घर का मुख्य द्वार सकारात्मक ऊर्जा के प्रवेश का सबसे बड़ा स्रोत होता है।

उपायः प्रवेश द्वार पर सिंदूर और घी मिलाकर 9 अंगुल लंबा और चौड़ा स्वास्तिक बनाएं। इसके अलावा, द्वार पर आम या अशोक के पत्तों का तोरण लटकाएं। यह नकारात्मक ऊर्जा को घर में प्रवेश करने से रोकता है।

2. समुद्री नमक का प्रयोग

Sea Salt यानी समुद्री नमक नकारात्मकता को सोखने की अद्भुत क्षमता रखता है।

उपायः घर के कोनों में या बाथरूम में एक कांच की कटोरी में समुद्री नमक भरकर रखें और इसे हर हफ्ते बदल दें। साथ ही, हफ्ते में कम से कम एक बार विशेषकर शनिवार को पानी में नमक मिलाकर पोछा लगाएं। इससे घर की दूषित ऊर्जा साफ होती है।

3. कपूर और दीपक का नियम

घर में अग्नि और सुगंध का संतुलन वास्तु दोषों को शांत करता है।

उपायः प्रतिदिन सुबह और शाम को कपूर जलाकर पूरे घर में उसका धुआं दिखाएं। इसके अलावा, घर के उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) में घी का दीपक जलाने से घर में देवदोष और वास्तु दोष का प्रभाव कम होता है।

4. ईशान कोण की सफाई और जल कलश

घर का उत्तर-पूर्व कोना यानी ईशान कोण सबसे पवित्र माना जाता है। यदि यहां कोई भारी सामान या गंदगी हो, तो गंभीर वास्तु दोष उत्पन्न होता है।

उपायः इस कोने को हमेशा साफ और खाली रखें। यहां एक तांबे के लोटे में गंगाजल या शुद्ध जल भरकर रखें। यदि संभव हो, तो यहां एक छोटा सा इनडोर वाटर फाउंटेन या एक्वेरियम भी रखा जा सकता है।

5. श्री यंत्र या पिरामिड की स्थापना

ऊर्जा को पुनर्जीवित करने के लिए यंत्रों का उपयोग बहुत प्रभावी होता है।

उपायः अपने घर के मंदिर में श्री यंत्र की स्थापना करें और उसकी नियमित पूजा करें। यदि घर के किसी खास हिस्से में वास्तु दोष है, जैसे गलत दिशा में शौचालय या रसोई, हो तो वहां वास्तु पिरामिड रखने से उस दिशा की नकारात्मकता काफी हद तक नियंत्रित हो जाती है।

रोजे में अपनाएं ये डाइट प्लान

रमजान के दौरान रोजा रखना शरीर और मन दोनों के लिए एक खास सफर है। साल 2026 में जब दिन लंबे होने लगे हैं, तब सहरी का महत्व और भी बढ़ जाता है। सुबह सूरज निकलने से पहले आप जो कुछ भी खाते हैं, वही तय करता है कि पूरे दिन आप कैसा महसूस करेंगे। एक सही और संतुलित सहरी आपको थकान और सिरदर्द से बचाती है, जबकि गलत खान-पान से आपको जल्दी प्यास या कमजोरी महसूस हो सकती है।

दिन भर एनर्जेटिक कैसे रहें?

खुद को एनर्जेटिक रखने के लिए आपकी सहरी में प्रोटीन, फाइबर और हेल्दी फैट का सही मिक्सचर होना चाहिए। ओट्स, दलिया या ब्राउन ब्रेड जैसे अनाज धीरे-धीरे पचते हैं और लंबे समय तक ताकत देते हैं। साथ ही अंडे, दही, दूध या दालों से मिलने वाला प्रोटीन भूख को कंट्रोल में रखता है। बादाम और अखरोट जैसे ड्राई फ्रूट्स भी पाचन को धीमा कर एनर्जी के स्तर को बनाए रखते हैं। याद रखें, सहरी छोड़ना या सिर्फ मीठी चीजें खाना आपको दिन के बीच में ही थका सकता है।

थकान से बचने के लिए क्या खाएं?

एक अच्छी सहरी का मतलब बहुत ज्यादा खाना नहीं, बल्कि सही खाना है। आप दूध और फलों के साथ ओट्स ले सकते हैं, या फिर अंडे के साथ पूरी शक्ति वाली रोटी खा सकते हैं। दही और खजूर का मेल भी पेट के लिए बहुत अच्छा होता है। केला, सेब और मुट्ठी भर ड्राई फ्रूट्स ऐसे विकल्प हैं जो प्राकृतिक मिठास और फाइबर प्रदान करते हैं, जिससे रोजे के दौरान शरीर में कमजोरी महसूस नहीं होती।

पानी पीने का सही तरीका क्या है?

सहरी में पानी पीना बेहद जरूरी है, लेकिन इसे एक बार में पीने के बजाय घूंट-घूंट करके धीरे-धीरे पिएं। इससे आपका शरीर पानी को बेहतर तरीके से सोख पाता है। ज्यादा चीनी वाले जूस, चाय या कॉफी पीने से बचें क्योंकि इनसे शरीर में डिहाइड्रेशन हो सकती है। पानी की कमी को पूरा करने के लिए तरबूज जैसे रसीले फल और दही को अपनी डाइट में जरूर शामिल करें।

फैटी लिवर का रामबाण इलाज

इन दिनों फैटी लिवर एक आम समस्या है, जो इन दिनों तेजी से लोगों को अपना शिकार बना रही है। इस कारण जातक को अक्सर कई तरह की सेहत संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यह एक गंभीर समस्या है, जिसको नजरअंदाज करने की गलती आपकी सेहत पर भारी पड़ सकती है। वहीं लंबे समय तक फैटी लिवर का इलाज न कराने से यह लिवर फेलियर की वजह बन जाता है।

बता दें कि लिवर हमारे शरीर के अहम अंगों में से एक है। जोकि शरीर को डिटॉक्स करने में मदद करता है। इसके अलावा यह शरीर में और भी कई जरूरी काम करता है। इसलिए जरूरी है कि अपने लिवर का खास ख्याल रखा जाए, जिससे किसी गंभीर परिणामों बचा जा सके। फैटी लिवर से बचाव के लिए जरूरी है कि डाइट के साथ एक्सरसाइज और योग भी जरूरी है। ऐसे में आज इस आर्टिकल के जरिए हम आपको कुछ ऐसे आसनों के बारे में बताने जा रहे हैं, जो फैटी लिवर से बचाव में मददगार हो सकते हैं।

त्रिकोणासन

यह एक ऐसा ट्राएंगल पोज है, जिसको फायदेमंद आसन माना जाता है। यह आसन बाहों, कोर और पैरों को मजबूत करने के अलावा कमर, कूल्हों और हैमस्ट्रिंग की स्ट्रेचिंग जैसे शारीरिक फायदे भी देता है। इस आसन को करने से पाचन बेहतर होता है।

ऐसे करें ये आसन- इस आसन को करने के लिए सबसे पहले सीधे खड़े हो जाएं और फिर अपने पैरों को फैलाएं। अब दाहिने हाथ को नीचे पैर की ओर झुकाएं और बाएं हाथ को ऊपर की तरफ उठाएं। फिर 30 सेकेंड तक इस पोजिशन में बने रहें और

फिर दूसरे हाथ से भी इस पोजिशन को ट्राई करें।

स्फिंक्स आसन

इस आसन को रीढ़ की हड्डी के लिए फायदेमंद माना जाता है। स्फिंक्स आसन को करने से स्पाइनल कार्ड मजबूत होती है। इस आसन का अभ्यास करने से कंधे, छाती और पेट स्ट्रेच होते हैं और पेट के अंगों की फंक्शनिंग बेहतर होती है। यह आसन थकान और तनाव दूर करने में भी मददगार है।

ऐसे करें ये आसन- इस आसन को करने के लिए पेट के बल लेट जाएं। अब कोहनियों को अपने कंधों के नीचे रखें और छाती को ऊपर की ओर उठाएं। इस दौरान आपको सीधा देखना है। इस पोजिशन में करीब 1 मिनट तक रहें और फिर पहले जैसी स्थिति में आ जाएं।

भुजंगासन

भुजंगासन को कोबरा पोज भी कहा जाता है। यह कई सारे फायदे पहुंचाता है। इसे करने से रीढ़ और पीठ की मांसपेशियों को मजबूती मिलती है, पोश्चर में सुधार होता है और पीठ में लचीलापन बढ़ता है।

ऐसे करें ये आसन- इस आसन को करने से पेट के बल लेट जाएं और दोनों हथेलियों को कंधों के नीचे रखें।

फिर सांस लेते हुए छाती और सिर एक साथ ऊपर उठाएं।

अब 30 सेकेंड तक इसी पोजिशन में रहें और इस प्रोसेस को 1 से 3 बार रिपीट करें।

धनुरासन

बता दें कि धनुरासन को बो पोज भी कहा जाता है। इस आसन को करने से पीठ और पेट की मांसपेशियां मजबूत बनती हैं। नियमित रूप के इस आसन को करने से रीढ़ की हड्डी के लचीलेपन में सुधार आता है। यह छाती और कंधों को खोलता है। पोश्चर में सुधार करता है, थकान, पाचन और तनाव कम करने में मदद करता है।

ऐसे करें ये आसन- इस आसन को करने के लिए पेट के बल लेट जाएं। फिर पैरों को मोड़कर टखनों को पकड़ें। इसके बाद अपनी छाती और पैरों को ऊपर की ओर उठाएं। अब 30 सेकेंड तक इस पोजिशन में रहें और फिर इसको 1-2 बार दोहराएं।

अर्ध मत्स्येन्द्रासन

यह आसन पाचन और रीढ़ की हड्डी के लिए फायदेमंद होता है। यह आसम तनाव से भी राहत दिलाने में मदद करता है। इसको करने से रीढ़ की हड्डी में लचीलापन बढ़ता है और पीठ दर्द से राहत मिलेती है। इस आसन के अभ्या से पेट के अंगों की फंक्शनिंग भी बेहतर होती है, जिससे पाचन में सुधार होता है और कब्ज की समस्या भी दूर होती है।

ऐसे करें ये आसन- इस आसन को करना बेहद आसान है। इस आसन को करने के लिए एक पैर को मोड़ें और दूसरे पैर को बाहर रखें। फिर शरीर को घुमाएं और पीछे की तरफ देखें। 1 मिनट तक इसी तरह रुकें और फिर दूसरी तरफ भी ऐसा ही करें।

अभिषेक शर्मा शीर्ष पर बरकरार

आईसीसी टी20 रैंकिंग में सूर्यकुमार यादव की लंबी छलांग

आईसीसी द्वारा गत दिनों जारी टी20 फॉर्मेट के बल्लेबाजों की रैंकिंग में सबसे ज्यादा फायदा भारतीय कप्तान सूर्यकुमार यादव को हुआ है। न्यूजीलैंड के खिलाफ पिछले तीन टी20 मैचों में खेली 2 अर्धशतकीय पारियों के दम पर सूर्यकुमार यादव की एंट्री शीर्ष दस बल्लेबाजों में हो गई है। साल 2025 में बतौर बल्लेबाज बुरी तरह फ्लॉप रहे और एक भी अर्धशतक लगाने में असफल रहे सूर्यकुमार यादव टी20 के शीर्ष दस बल्लेबाजों की रैंकिंग से बाहर हो गए थे। 2026 की शुरुआत भारतीय कप्तान के लिए बेहतरीन रही है। न्यूजीलैंड के खिलाफ जारी 5 टी20 मैचों की सीरीज के पहले तीन मैचों में 2 अर्धशतक की बदौलत उन्होंने 171 रन बनाए हैं। पिछले दोनों मैचों में वह नाबाद रहे। उनका सर्वाधिक स्कोर 82 रहा है। तीन मैचों में किए दमदार प्रदर्शन की बदौलत सूर्यकुमार यादव ने पांच स्थान की छलांग लगाते हुए सातवां स्थान हासिल कर लिया है। शीर्ष दस बल्लेबाजों की रैंकिंग पर नजर डालें तो भारत के अभिषेक शर्मा पहले स्थान पर मजबूती से बने हुए हैं। इंग्लैंड के फिल साल्ट दूसरे, भारत के तिलक वर्मा तीसरे, इंग्लैंड के जोस बटलर चौथे और पाकिस्तान के साहिबजादा फरहान पांचवें नंबर पर हैं।

श्रीलंका के पाथुम निसांका छठे, भारत के सूर्यकुमार यादव सातवें, ऑस्ट्रेलिया के ट्रेविस हेड आठवें, ऑस्ट्रेलिया के मिशेल मार्श नौवें और न्यूजीलैंड के टिम सिफर्ट दसवें स्थान पर हैं। हेड, मार्श, सिफर्ट को 1-1 स्थान का नुकसान हुआ है।

टी20 गेंदबाजों की रैंकिंग पर नजर डालें तो भारत के वरुण चक्रवर्ती पहले, अफगानिस्तान के राशिद खान दूसरे, श्रीलंका के वानिंदु हसरंगा तीसरे और न्यूजीलैंड के जैकब डफी चौथे स्थान पर हैं।

पाकिस्तान के अबरार अहमद पांचवें स्थान पर हैं। उन्हें एक स्थान का फायदा हुआ है। इंग्लैंड के आदिल रशीद छठे, बांग्लादेश के मुस्तफिजुर रहमान सातवें, ऑस्ट्रेलिया के नाथन एलिस आठवें, अफगानिस्तान के मुजीब उर रहमान नौवें स्थान पर हैं। रहमान को पांच स्थान का फायदा हुआ है।

भारत में टी20 विश्व कप 2026 का मैच कवर नहीं कर पाएंगे बांग्लादेशी पत्रकार

आईसीसी ने बताया है कि उसने टी20 विश्व कप 2026 के भारत में होने वाले मैचों को कवर करने के लिए बांग्लादेशी पत्रकारों के आवेदन को अस्वीकार कर दिया है। एक रिपोर्ट के मुताबिक, आईसीसी अधिकारियों ने कहा है कि बांग्लादेश की सरकार और बीसीबी ने सुरक्षा कारणों का हवाला देते हुए बांग्लादेश क्रिकेट टीम को भारत नहीं भेजने का फैसला किया था और भारत को असुरक्षित बताया था। उसी आधार पर बांग्लादेशी पत्रकारों के वीजा और एक्रिडिएशन आवेदन खारिज कर दिए गए हैं। विश्व कप का आयोजन भारत और श्रीलंका में 7 फरवरी से 6 मार्च तक होना है। आईसीसी द्वारा यह निर्णय बांग्लादेश क्रिकेट बोर्ड द्वारा सुरक्षा कारणों की वजह से अपनी टीम को भारत न भेजने और विश्व कप का बहिष्कार करने के फैसले के बाद लिया गया।

विरासत से नहीं, टैलेंट से सफल अभिनेत्री बनीं श्रुति हासन

भारतीय सिनेमा में कुछ नाम ऐसे हैं, जो सिर्फ अभिनय तक सीमित नहीं हैं। ये नाम अपनी बहुआयामी प्रतिभा से एक अलग पहचान बनाते हैं। 28 जनवरी को अपना जन्मदिन मनाने वालीं श्रुति कमल हासन ऐसी ही एक शख्सियत हैं। एक सफल अभिनेत्री, गायिका, संगीतकार और परफॉर्मर, जिनकी पहचान केवल एक स्टार किड के तौर पर नहीं, बल्कि एक मेहनती और टैलेंटेड आर्टिस्ट के रूप में बनी है। 1986 में जन्मीं श्रुति हासन, भारतीय सिनेमा के दिग्गज अभिनेता कमल हासन और मशहूर अभिनेत्री सारिका ठाकुर की बेटी हैं। हासन परिवार में जन्म लेने के बावजूद श्रुति ने अपनी राह खुद बनाई। वह न सिर्फ एक सफल अभिनेत्री हैं, बल्कि एक स्थापित गायिका और म्यूजिक कंपोजर भी हैं, जिन्होंने तमिल, तेलुगु और हिंदी सिनेमा में अपनी मजबूत मौजूदगी दर्ज कराई है। श्रुति ने चेन्नई के एबाकस मोंटेसरी स्कूल में पढ़ाई की और दसवीं तक वहीं शिक्षा ग्रहण की। इसके बाद मुंबई के सेंट एंड्रयूज कॉलेज से साइकोलॉजी की पढ़ाई की। बचपन से ही उन्हें संगीत और सिनेमा में गहरी रुचि थी। इसी लगाव ने उन्हें आगे चलकर अमेरिका के कैलिफोर्निया स्थित म्यूजिशियंस इंस्टीट्यूट तक पहुंचाया, जहां उन्होंने संगीत की औपचारिक ट्रेनिंग ली।

महज छह साल की उम्र में श्रुति हासन ने अपने पिता की फिल्म थेवर मगन (1992) में पहला गाना गाया, जिसे इलैया राजा ने कंपोज किया था। इसके बाद स्कूल के दिनों में उन्होंने हिंदी फिल्म 'चाची 420' (1997) में भी गायन किया। साल 2000 में कमल हासन के निर्देशन में बनी फिल्म 'हे राम' में उन्होंने बाल कलाकार के रूप में अतिथि भूमिका निभाई और उसी फिल्म के लिए हिंदी और तमिल में टाइटल थीम 'रामा रामा' भी गाई।

एक अभिनेत्री के तौर पर श्रुति ने वयस्क भूमिका में डेब्यू 2009 में बॉलीवुड फिल्म 'लक' से किया। इसके बाद उन्होंने दक्षिण भारतीय सिनेमा की ओर रुख किया और यहीं से उनका करियर नई ऊंचाइयों पर पहुंचा।

श्रुति को असली पहचान तेलुगु फिल्म 'अनागनगा ओ धीरुडु' (2011) से मिली। इन फिल्मों में उनके अभिनय ने उन्हें फिल्मफेयर अवॉर्ड फॉर बेस्ट फीमेल डेब्यू साउथ दिलाया। इसके बाद उन्होंने कई सफल फिल्मों में काम किया। 'रेस गुर्रम' (2014) में दमदार भूमिका के लिए उन्हें फिल्मफेयर अवॉर्ड फॉर बेस्ट एक्ट्रेस तेलुगु मिला। कुल मिलाकर श्रुति के नाम तीन फिल्मफेयर अवॉर्ड्स सहित कई सम्मान दर्ज हैं।

हिंदी सिनेमा में श्रुति हासन ने 'डी-डे', 'रामैया वस्तावैया', 'गब्बर इज बैक', 'वेलकम बैक', 'रॉकी हैंडसम' जैसी फिल्मों में काम किया। जहां कुछ फिल्मों को समीक्षकों की सराहना मिली, वहीं कुछ बॉक्स ऑफिस पर सफल रहीं। अभिनय के साथ-साथ संगीत श्रुति हासन की पहचान का अहम हिस्सा है। वह एक स्थापित पार्श्व गायिका हैं। साल 2009 में उन्होंने अपने पिता के प्रोडक्शन 'उन्नैपोल ओरुवन' से बतौर म्यूजिक डायरेक्टर भी डेब्यू किया। इसके बाद उन्होंने अपना खुद का म्यूजिक भी तैयार किया और बैंड के जरिए अपनी अलग पहचान बनाई। श्रुति हासन का सफर इस बात का प्रमाण है कि पहचान नाम से नहीं, काम से बनती है और सुर, स्क्रीन और संवेदनाओं का यह संगम अभी और भी लंबा चलना है।

विश्वास करेंगे एक बार, इस्तेमाल करेंगे बार-बार...

SRI HARIVANSH ENTERPRISES

Corp. Of Goel Tower Anura Kala, Chinhat Lucknow-226028 (U.P.)
Production Unit: Sandauli Umarpur, Safedabad, Barabanki - 225003 (U.P.)
Customer Care No.: +91 9415867528

Manufacturer of Mould, Dies, Jig Fixtures & Plastic, Sheet Metal Components

C-216, Sector - 63, Noida - 201309, U.P. (INDIA)
Mo-9811191394, 9910768136
Web - www.universalplatoind.com